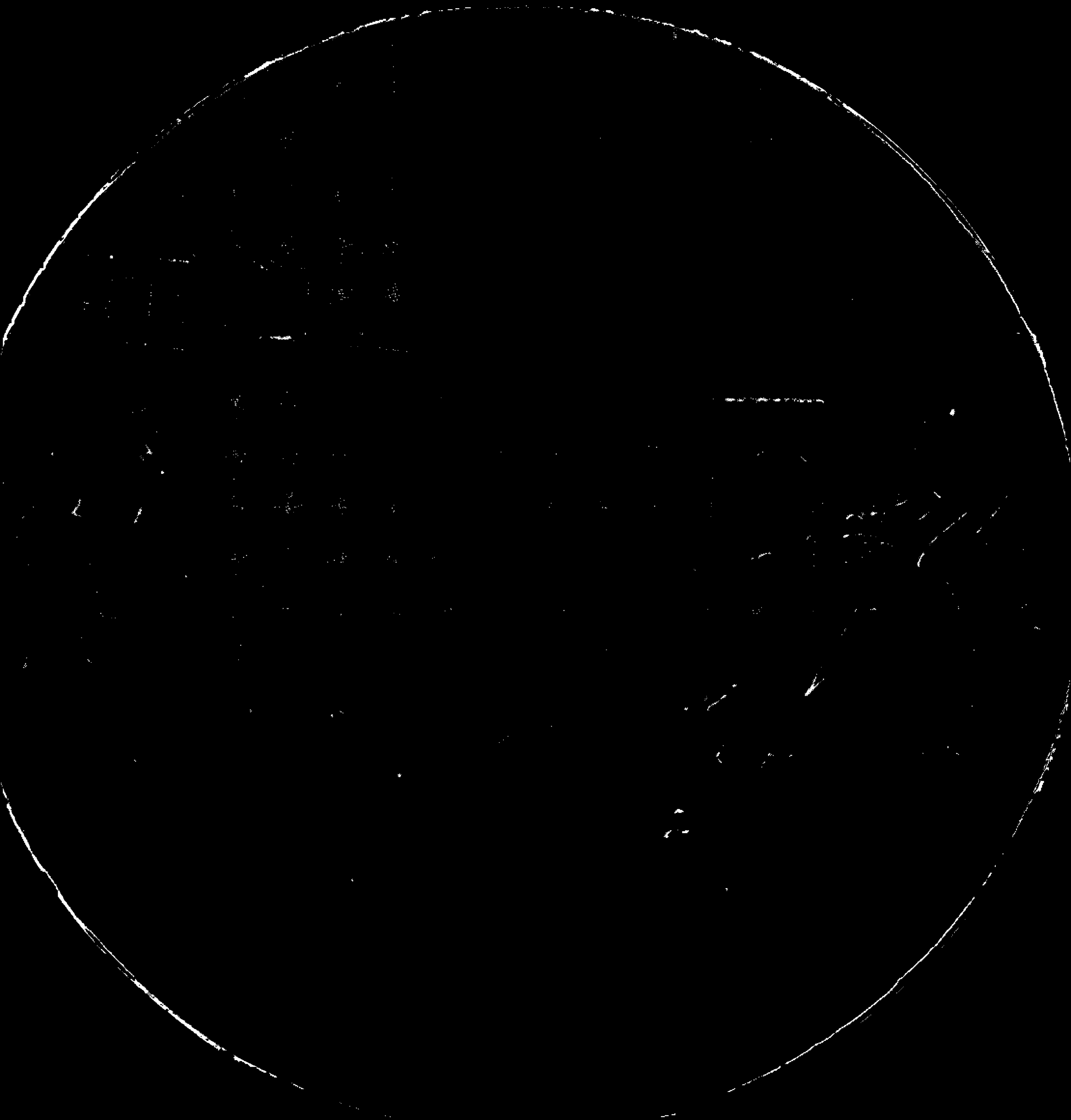

लक्षद्वीप के आदिवासियों की दस्तकारियां

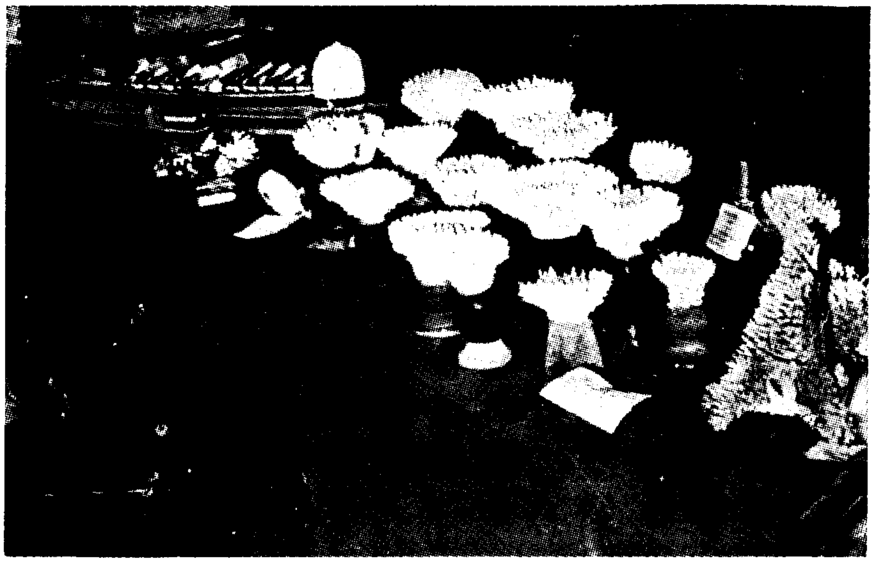

★ के० गोपीनाथ ★

लक्षद्वीप के आदिवासी अपनी दस्तकारी के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं, वे सुन्दर-सुन्दर वस्तुओं का निर्माण करते हैं। तथा इन वस्तुओं में प्रयुक्त होने वाली कच्ची सामग्री भी वहीं प्राप्त हो जाती है। कावारत्ती द्वीप में स्थित 'ऊजरा' नाम की प्राचीन मस्जिद अपनी काष्ठ स्थापत्य कला और मूर्ति कला का एक अनूठा उदाहरण है। दीर्घ काल से समय के थपेड़ों को सहते रहने के बावजूद भी इसकी सुन्दरता में कमी नहीं आई।

मूंगों को चिपका कर बनाए गए सुन्दर सुन्दर फूलों के गुलदस्ते, यहां की प्रमुख दस्तकारी में गिने जाते हैं। यहां के अधिकांशत: निवासी बड़े निपुण गोताखोर होते हैं। वे विभिन्न प्रकार के प्रवाल पुष्पों को समुद्र तल से एकत्र करते हैं तथा पुष्पों के आकार के अनुसार उनके लिए गुलदस्ते बनाकर उनमें उन्हें लगा देते हैं, गुलदस्तों में लगे हुए ये पुष्प बड़े मनोहारी लगते हैं।

लक्षद्वीप के कलाकार मूंगों के टुकड़ों को बारीकी से उकेरकर तरह-तरह के राजावटी सामान जैसे-चिड़ियां, पशु, पोधे तथा चित्ताकर्षित करने वाली अनेक प्रकार की वस्तुएं बनाते हैं। इन कार्यों के अतिरिक्त वे विभिन्न प्रकार की कोड़ियां और सीपियां समुद्र से एकत्र करते हैं जो कि उनकी आय का प्रमुख साधन हैं।

नावों का निर्माण करना इन द्वीपों का प्रमुख उद्योग है। यहां के व्यक्ति लकड़ी से सुन्दर-सुन्दर वस्तुएं बनाते हैं। तेज चलने वाली नावें, जहाज, विभिन्न प्रकार की पालदार नावें तथा देशी डोंगियां बनाने का कार्य यहां के काष्ठ कलाकार सौन्दर्य और शक्ति के प्राकृतिक प्रतीकों के छोटे-छोटे माडल तथा लकड़ी मूंगों और सीपियों से अद्भुत वस्तुएं बनाते हैं।

नारियल की रस्सी बनाना भी इन द्वीपों का प्रमुख कुटीर उद्योग है। इतना ही नहीं बल्कि वे लोग नारियल की जटाओं से अन्य सुन्दर-सुन्दर वस्तुएं भी बनाते हैं। यहां की बनी हुई स्क्रूपाइन चटाइयां भी बड़ी लोकप्रिय हैं। यदि इन कार्यों का इन लोगों को प्रशिक्षण दिया जाए तो निःसन्देह इस भौंडी कला को एक सुन्दर कला में बदला जा सकता है और यह वहां के निवासियों की आय का एक साधन सिद्ध हो सकती है। कुछ कलाकार नारियल के खोखले से कप, तश्तरी-एस्ट्रे, फूलदान और लेम्पस्टेण्ड जैसी सुन्दर-सुन्दर वस्तुएं बनाते हैं।

अब इन कार्यों का प्रशिक्षण देने के लिए लक्षद्वीप प्रशासन ने कावारत्ती द्वीप में सन् 1973 में दस्तकारी प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना की है। मूंगे से पुष्प बनाने, सीपियों और मूंगों से खिलौने बनाने, लकड़ी की दस्तकारी तथा नारियल के खोखले से सुन्दर-सुन्दर वस्तुएं बनाने आदि जैसी दस्तकारियों में प्रति वर्ष प्रत्येक जत्थे में दस व्यक्तियों को प्रशिक्षण दिया जाता है। इस प्रशिक्षण के दौरान उन्हें किसी प्रकार की असुविधा न हो, अत: उन्हें प्रशिक्षण की अवधि में वजीफा भी दिया जाता है और प्रशिक्षण में सफलता प्राप्त होने के पश्चात् अपना रोजगार प्रारम्भ करने के लिए सहायता भी दी जाती है।

अनु० जी० एस० मिश्रा
बी-46, करमपुरा
नई दिल्ली-110015

जिस तरह भंवरा फूलों की रक्षा करते हुए और बिना उनको क्षति पहुंचाए हुए उनके मधु को ग्रहण करता है उसी प्रकार शासन को भी प्रजा जनों को बिना किसी प्रकार का कष्ट और क्षति पहुंचाए कर वसूल करना चाहिए।

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र, फोटो आदि भेजिए। भाषा सरल हो और रचना का आकार 'कुरुक्षेत्र' के दो ढाई पृष्ठ से अधिक न हो।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनाने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

●

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक 'कुरुक्षेत्र' (हिन्दी), कृषि मन्त्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

●

दूरभाष : 382406

एक प्रति 50 पैसे ● वार्षिक चन्दा 5.00 रु

सम्पादक : महेन्द्रपाल सिंह

उपसम्पादक : पारसनाथ तिवारी, शशि चावला

आवरण पृष्ठ : बलराम मण्डल

कुरुक्षेत्र

वर्ष 22 आषाढ़ 1899 अंक 9

इस अंक में — पृष्ठ संख्या

गांवों में खेल-कूदों की उपेक्षा क्यों ? (सम्पादकीय) 2

ग्रामीणों के स्वास्थ्य-सुधार की दिशा में नया कदम 3
राजनारायण

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण आवास व्यवस्था 6
बी० के० शर्मा

भारत का संसदीय लोकतन्त्र: खतरे और चुनौतियां 8
यतीन्द्र भटनागर

खाद्यान्नों क भण्डारण 11
वसन्त कुमार

लघु उद्योग ही बेरोजगारी व गरीबी दूर करने में समर्थ 14
अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार

सहकारी वितरण के माध्यम से ग्रामीण समृद्धि 16
आर० एस० उमरे

मध्य प्रदेश का पहला कृषि पंडित-श्री नारायण भाई चावड़ा 18
एल० एस० बघेल

उषा रानी (कविता) 19
महाराज

खुम्बी उगाएं, आमदनी बढ़ाएं 20
ए० आर० पटेल

मिल-जुल कर संरचना के काम में जुट जाएं 22

रुपक: बैल के पांव तले 25
ओम प्रकाश गुप्ता

कहानी : गांव और गाय 28
बटुकेश्वर दत्त सिंह

आ गया है हमारा जमाना (कविता) 29
विद्या 'रश्मि'

सिमेंट का विकल्प 30
सुरेन्द्र अनुरागी

साहित्य-समीक्षा 31

केन्द्र के समाचार 33

राज्यों के समाचार 34

सम्पादकीय

गांवों में खेल-कूदों की उपेक्षा क्यों ?

इसमें शक नहीं कि अंग्रेजों के शासन काल में गांवों की दुर्दशा थी परन्तु गांवों में उस समय जैसे स्वस्थ, सुन्दर और बलिष्ठ जवान देखने को मिल सकते थे, वैसे आज के स्वतंत्र भारत में मिलना कठिन है। उस समय न गांवों के लिए कोई खेल परिषद् थी और न ब्रिटिश भारत की सरकार की ओर से गांवों में खेलों को बढ़ावा देने के लिए लाखों करोड़ों रुपये ही खर्च किए जाते थे। परन्तु फिर भी गांव-गांव मे पहलवानी तथा लम्बी-ऊंची कूदों की प्रतियोगिताएं होतीं थीं और गदकेबाजी तथा भार उठाने जैसे व्यायामों का काफी प्रचार-प्रसार था, पर कैसी विडम्बना है कि आज के हमारे स्वतंत्र भारत के गांवों में व्यायाम के ये सारे क्रिया-कलाप नदारत हैं। सरकार देश में खेलों को बढ़ावा देने के लिए प्रति वर्ष लाखों रुपये व्यय करती है पर इस धन से देश के कितने गांवों में खेलों को प्रोत्साहन मिलता है यह जरा विचारणीय है।

हमारा देश गांवों का देश है और हमारे गांव जहां विकास के अनेक क्षेत्रों में उपेक्षित रहे है, वहां खेलों और खिलाड़ियों के विकास के क्षेत्र में भी काफी उपेक्षित रहे हैं। राष्ट्रीय खेल परिषद् ने भी अब तक अपना ध्यान शहरों में ही खेलों और खिलाड़ियों के विकास पर केन्द्रित रखा है। यह बात किसी से छिपी नहीं है कि विदेशों में होने वाली खेल प्रतियोगिताओं में हमारे खिलाड़ी दशाब्दियों से मुंहकी खाते आ रहे हैं और जो भारत हाकी के खेल में किसी दिन विश्व विजेता था आज वह उसमें भी पिछड़ गया है। हमारी मान्यता है कि देश में अब हम गामा जैसा विश्व विजयी पहलवान तभी पदा कर सकते हैं जब हम अपने गांवों में खेलों, खिलाड़ियों और पहलवानी को प्रोत्साहन दें। गांवों की आवोहवा, गांवों के शुद्ध सात्विक खान-पान तथा गांवों के रहन सहन ही देश में अच्छे खिलाड़ी पैदा करने में समर्थ हो सकते हैं। गांवों के हट्टे-कट्टे जवान ही सेनाओं में भर्ती होकर हमारी सीमाओं की रक्षा करते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सबसे बड़ी दुःखद बात यह हुई है कि अंग्रेजों के जमाने में हमारे गांवों में जहां शराब का कोई नाम तक न जानता था वहां अब शराब की नालियां बहने लगी हैं। फलतः शारीरिक, मानसिक और चारित्रिक दृष्टि से ग्रामीण पतन की ओर अग्रसर है। यह स्थिति बड़ी भयावह है, यदि समय रहते हमने अपने ग्रामीणों की पतनोन्मुख स्थिति पर ध्यान न दिया तो न हमें अपनी सेनाओं के लिए हट्टे-कट्टे, लंगोट के पक्के जवान मिल सकेंगे और न हम अच्छे खिलाड़ी ही पैदा कर सकेंगे।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले गांवों में दूध बेचना पाप समझा जाता था परन्तु आज गांवों का सारा घी-दूध शहरों में खिंचा चला आता है, फिर रुखी-सूखी खाकर कोई कैसे पहलवान या अच्छा खिलाड़ी बन सकता है। अतः जरूरत इस बात की है कि गांवों के लोगों में फिर से ऐसी भावना पैदा की जाए कि वे घी-दूध की बिक्री को पाप समझें। डेरियां खोल कर शहर की घी-दूध की आवश्यकताएं पूरी की जा सकती हैं। केन्द्रीय स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण मन्त्रालय ने ग्रामीण स्वास्थ्य सुधार की एक व्यापक योजना तैयार की है और वह एक अच्छी चीज है। परन्तु इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि सबसे बड़ी रोग प्रतिरोधक शक्ति बलिष्ठ शरीर में होती है। अतः जरूरी है कि ग्रामीणों को शारीरिक दृष्टि से बलिष्ठ बनाया जाए। ★

ग्रामीणों के स्वास्थ्य सुधार की दिशा में नया कदम ★ राजनारायण

[भारत गांवों का एक विशाल देश है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जहां यह आशा की गई थी कि देश में आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक क्षेत्र में विकास का तेज दौर आएगा वहां यह भी आशा की गई थी कि हमारे ग्रामीणों के स्वास्थ्य सुधार की दिशा में भी तेज कदम उठाए जाएंगे। परन्तु गत 30 वर्ष की अवधि में जो कुछ हुआ वह 'ऊंट के मुंह में जीरा' के समान हुआ। खुशी की बात यह है कि हमारी नयी सरकार गांवों के विकास पर अधिक बल दे रही है और श्रीराजनारायण ने तो कमर कस ली है स्वास्थ्य की दृष्टि से गांवों का काया कल्प करने की। इस लेख में उनकी नयी स्वास्थ्य नीति की रूप रेखा प्रस्तुत है :—सम्पादक]

माओत्से-तुंग ने कहा था कि शक्ति बन्दूक की नली से प्राप्त होती है। परन्तु भारत की जनता ने यह सिद्ध करके दिखा दिया कि शक्ति मतपेटियों से भी प्राप्त की जा सकती है। उन्होंने विश्व के लोगों की लोकतांत्रिक प्रणाली की प्रभावकारी शक्ति में फिर से आशा पैदा की है और अपने देश में इसकी जड़ें और अधिक मजबूत और गहरी जमा दी हैं। यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि भारत ने एक लम्बे अर्से के बाद लोकतांत्रिक परिपक्वता प्राप्त की है। यहां बलिदान की वे दर्दभरी कहानियां बताना शायद आवश्यक नहीं है, जिनके फलस्वरूप यह मौजूदा स्थिति लाना संभव हुआ है। इस दास्तान के कुछ हिस्से तो लोगों को पहले ही मालूम हैं। लगभग रोज ही नई-नई बातें सामने आ रही हैं। सब कुछ कहा जाने के बाद भी बहुत कुछ अनकहा रह जाएगा। फिर भी यह सोचकर अब हम राहत की सांस ले सकते हैं कि यातना की लम्बी काली रात का अंत हो गया है और इस तथ्य से शक्ति प्राप्त कर सकते हैं कि भारत की जनता में वह ताकत है जो इस जोरो-जुल्म के दौर को फिर से नहीं आने देगी।

लोकतंत्र का अर्थ है कि जनता की सरकार हो, जनता द्वारा बनाई गई हो और वह जनता के कल्याण के लिए हो। हम यह कहते-कहते कभी नहीं थकते कि भारत गांवों में बसता है और ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के बिना देश सही अर्थों में उन्नति नहीं कर सकता। प्रश्न यह है कि हमने गांवों को उस दलदल में से निकालने के लिए अब तक क्या किया है जिसमें वे 1947 से पहले से फंसे हुए थे? यह जताने के लिए कि पिछले 30 वर्षों में ग्रामीण जीवन काफी सुधरा है—बड़े-बड़े आंकड़े प्रस्तुत किए जाते हैं। मैं इस दावे को विवाद का रूप नहीं देना चाहता। परन्तु कोई भी व्यक्ति निपट सचाई से अपनी आंखें नहीं मूंद सकता। अगर लोकतंत्र का मतलब अधिक से अधिक लोगों की अधिकाधिक भलाई से है—तो मैं पूछता हूं इससे हमारे उन 80 प्रतिशत लोगों का जो गांव में बसते हैं कितना कल्याण हुआ है? वहां अब तक हुई प्रगति के बावजूद सामाजिक-आर्थिक दृष्टिकोण से शहर और गांव के बीच की दूरी अब भी उतनी ही बनी हुई है जितनी पहले थी। हमें सच्चा लोकतंत्र कायम करना है और यह केवल तभी संभव है जब कि सत्तारूढ़ दल, सत्ता सौंपने वाले लोग और विपक्षी दल ग्रामीण विकास को अपने दिलो-दिमाग में पहला स्थान दें। देश में सूर्य का प्रकाश समूचे देश में सब पर समान रूप से फैलने दीजिए जिससे उनका जीवन और अधिक खुशहाल हो। जिन्होंने जितना राष्ट्र से पाया है उससे कहीं अधिक राष्ट्र पर न्यौछावर कर दिया है। यह एक सहकारी प्रयास है जो केवल तभी सफल हो सकता है जब हम सभी नगरवासी, ग्रामवासी मिलकर बीड़ा उठाएं तथा जो कुछ योजना बनायें उस पर पूरी ईमानदारी व दृढ़ता के साथ अमल करके भी दिखाएं।

मैं अब तक के अपने सारे जीवन में हमेशा एक लक्ष्य के लिए लड़ता रहा हूं और मेरा यह योद्धा का रूप सत्ता में आने पर समाप्त नहीं होगा। यह भगवान् की इच्छा है और मैं इसके आगे

श्रृद्धा से नतमस्तक होता हूं। परन्तु सत्ता मेरे लिए सेवा का एक अवसर है। यह अवसर है उस लड़ाई को जारी रखने का जो मैं अब तक लड़ता रहा हूं। लक्ष्य वही है—अपने देशवासियों की भलाई, जिनमें अधिकांश गांवों में रहते हैं। हां लड़ाई लड़ने के हथियार अब भिन्न हैं। मेरा सदा यह प्रयास रहेगा कि मैं इस माध्यम से अपनी उस जनता के जीवन स्तर को बेहतर बना सकूं जिसने मुझमें विश्वास व्यक्त किया है।

केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री के नाते मुझ पर जो जिम्मेदारी डाली गई वह काफी भारी है। इस समय देश में एक दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह है कि अब तक स्वास्थ्य को उतना महत्व नहीं दिया गया जितना इसे देना चाहिए था। हमने इस्पात संयंत्रों, सारी मशीनें, कारखानों, आणविक केन्द्रों आदि के निर्माण पर करोड़ों रुपए खर्च कर दिए। परन्तु स्वास्थ्य

और शिक्षा पर अपेक्षाकृत बहुत ही कम धन लगाया गया। मैं इस बात से सहमत हूं कि राष्ट्र की प्रगति में लगाई गई सारी पूंजी आखिकार व्यक्ति की प्रगति के लिए ही है। परन्तु इसके साथ-साथ मेरा यह भी विचार है कि जब तक जनता मजबूत नहीं होगी, देश मजबूत नहीं हो सकता और जनता तब तक मजबूत नहीं हो सकती जब तक कि उन्हें उन्नत करने के लिए अधिक और सीधे रूप में धन नहीं लगाया जाता। विशाल इस्पात कारखाने के लगाने का तब तक कोई फायदा नहीं है जब तक उनके निकट ऐसे अनेक लोगों का बसेरा है जिन्हें खाने के लिए दो जून रोटी और सिर ढकने के लिए एक झोंपड़ी भी मुहैया नहीं। स्वास्थ्य मंत्री होने के नाते एक तरह तो मैं केन्द्र और राज्यों में अपने सहयोगियों से स्वास्थ्य कार्यक्रम के लिए अधिक धन निर्धारित करने के लिए कहूंगा और दूसरी ओर यह देखूंगा कि ये कार्यक्रम लोगों के हितों के लिए खासकर जो गांवों में रहते हैं और जो समाज के कमजोर वर्गों से सम्बन्धित हैं, ठीक प्रकार से लागू किए जाएं।

अपने मंत्रालय के सहयोग से ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाएं बेहतर बनाने के लिए मैंने पहले ही एक योजना तैयार कर ली है। इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण लोगों को उचित चिकित्सा सुविधा प्रदान करना और इसके साथ-साथ उन्हें बीमारियों से अपनी रक्षा करने और अच्छा स्वास्थ्य बनाने की शिक्षा देना है। हमारे देश में 5,300 प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र और 37,000 से भी अधिक उप-केन्द्र हैं—जो सभी गांवों में हैं। मैंने इस बात को समझने की कोशिश की है कि इतने सारे चिकित्सा केन्द्रों के होने पर भी हमारे ग्रामवासियों के स्वास्थ्य में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। इस दिशा में मेरा अपना निष्कर्ष यह है कि स्वास्थ्य कार्यक्रमों में हमें जनता का पर्याप्त योगदान नहीं मिलता। लोगों ने इस क्षेत्र में आवश्यक उत्साह नहीं दिखाया। वे इस ओर उदासीन से ही रहे हैं। 1952 में गांधी जयन्ती पर सामुदायिक विकास आंदोलन प्रारंभ किया गया था। इस आंदोलन के प्रशंसनीय उद्देश्यों में से एक उद्देश्य—गांव में रहने वाले व्यक्ति में बेहतर जीवन के लिए आकांक्षा उत्पन्न करना था। स्वास्थ्य के बारे में वह आकांक्षा कहां चली गई! लोगों ने स्वास्थ्य केन्द्रों और उप-केन्द्रों से आवश्यक लाभ क्यों नहीं उठाया? हो सकता है इसका कारण यह रहा हो कि देहातों में स्वास्थ्य कार्यक्रम चलाने वालों में से बहुतों का मन कहीं और अटका हुआ हो। अतः लोग उन्हें पसंद न करते हों।

नई योजना के अन्तर्गत 1,000 व्यक्तियों की आबादी वाला प्रत्येक गांव अपना एक ऐसा प्रतिनिधि चुनेगा जो उसी गांव का हो और जिसमें लोगों को विश्वास हो और वह स्वास्थ्य के क्षेत्र में ईमानदारी से अपने गांव वालों की सेवा करने में सक्षम हो। इन प्रतिनिधियों को साधारण और आम बीमारियों का उपचार करने के लिए प्रशिक्षण दिया जाएगा। इनकी आयु 30 वर्ष से कम होगी और ये कम से कम छठी कक्षा पास होंगे। प्रशिक्षण तीन महीनों का होगा जो 20-20 के दलों में प्राथमिक चिकित्सा केन्द्रों में दिया जाएगा। पाठ्यक्रम में स्वास्थ्य विज्ञान की मूलभूत बातें, स्वास्थ्य अच्छा रखने के उपाय अरोग्य शास्त्र, छूत की आम बीमारियों का इलाज, जच्चा-बच्चा की देखभाल साधारण बीमारियों का इलाज और प्राथमिक उपचार आदि शामिल हैं। चिकित्सा के परम्परागत गत तरीकों और योगाभ्यास को भी प्रशिक्षण कार्यक्रम में उचित महत्व दिया जाएगा। प्रशिक्षण के अंत में ग्रामीण प्रतिनिधियों की परीक्षा की जाएगी और एक प्रमाण-पत्र दिया जाएगा। उन्हें एक बक्सा भी दिया जाएगा जिसमें आम रोगों के इलाज के लिए आधुनिक और परम्परागत तरीके की औषधियां होंगी और चिकित्सा सम्बन्धी एक पुस्तक भी होगी। इसके बाद उन्हें काम करने के लिए उनके गांवों में भेज दिया जाएगा।

इन कार्यकर्ताओं को "सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता" कहा जाएगा। वे अपने कृषि, अध्यापन, दस्तकारी आदि के सामान्य धंधे करने के लिए स्वतंत्र होंगे तथा प्रतिदिन अपने खाली समय में दो से तीन घंटे स्वास्थ्य सेवा का काम करेंगे।

हमारा अनुमान है कि इस योजना के आरम्भ होने के दो वर्षों बाद हमारे पास गांवों में 5.8 लाख सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता हो जाएंगे। इन कार्यकर्ताओं को तीन महीने के प्रशिक्षण के दौरान प्रतिमाह 200 रुपए का वजीफा दिया जाएगा और इसके बाद गांवों में स्वास्थ्य सेवा का कार्य करने के लिए प्रतिवर्ष 600 रुपए भत्ते के रूप में दिए जाएंगे। शुरू में बक्से की लागत 200 रुपए होगी। इसके अतिरिक्त, प्रत्येक कार्यकर्ता को प्रतिवर्ष 600 रुपए की दवाएं दी जाएंगी।

सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का काम लोगों की आम बीमारियों का उपचार करना होगा। वे नव-जात शिशुओं और बच्चों को रोगों से बचाव का टीका लगायेंगे और बच्चों को अंधेपन से बचाने के लिए उन्हें विटामिन ए की गोलियां देने की व्यवस्था करेंगे तथा मलेरिया के मरीजों का इलाज करेंगे। वे मलेरिया के बुखार का पता लगाने के लिए खून की स्लाइडें तैयार करेंगे। सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता के कार्यों का निरीक्षण किया जाएगा और यदि वह अपने इलाके के सभी लोगों की स्वास्थ्य सेवा करने में पूर्ण सक्षम है तो उसका वार्षिक भत्ता बढ़ाकर 1200 रु० करने पर भी विचार किया जा सकता है।

भारत में शिशु मृत्यु दर बहुत अधिक है। 1971 में यह 122 प्रति हजार थी। गांवों में प्रसव अधिकतर अशिक्षित और अयोग्य दाइयों की देख-रेख में ही कराए जाते हैं। यह एक बहुत दुःखद स्थिति है। अभी आने वाले काफी लंबे समय तक शायद हम ऐसी पर्याप्त व्यवस्था नहीं कर पाएंगे जिससे सभी या अधिकतर प्रसव अस्पतालों और

क्लिनिकों में हो सकें, तथापि इस नई योजना में प्रत्येक गांव के लिए एक दाई को प्रशिक्षित करने का प्रावधान है—जिनकी संख्या करीब दो वर्षों के बाद 5.8 लाख हो जाएगी। दाइयों को एक महीने का प्रशिक्षण दिया जाएगा और इस दौरान प्रत्येक दाई को 300 रु० वजीफा मिलेगा। इन्हें भी एक बकसा दिया जाएगा जिसमें प्रसव के समय काम आने वाले आम उपकरण होंगे। इस बकसे के बेकार हो जाने पर निःशुल्क नया बकसा दे दिया जाएगा। इस योजना के अंतर्गत जिन दाइयों को प्रशिक्षण दिया जाएगा, उनका चुनाव भी सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता की तरह गांव वाले ही करेंगे। वे उसी गांव की होंगी जहां उन्हें काम करना है। यह प्रशिक्षण उन्हें स्वास्थ्य केन्द्रों में दिया जाएगा जिस से अपने काम की उन्हें अधिक जानकारी हो सकेगी और वे पहले से अधिक निपुण बन सकेंगी। इसमें प्रसव से पहले और प्रसव के बाद महिलाओं की देख-रेख के बारे में बताया जाएगा। ये दाइयां, महिलाओं को छोटे परिवार की आवश्यकता के बारे में भी समझाएंगी।

हमें आशा है कि उसी धरती और वातावरण के होने के नाते कुछ समय बाद सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता और दाइयां इस लम्बी खाई को पाटने में सफल होंगी जो इस समय चिकित्सा विज्ञान और ग्रामीण समुदाय के बीच नजर आती है। व्यवसायिक स्तर पर, इन कार्यकर्ताओं और दाइयों को बहु-उद्देश्यीय कार्यकर्ताओं का मार्गदर्शन और सहायता उपलब्ध होगी। 1984-85 तक 5,000 की जनसंख्या के लिए दो (एक पुरुष, एक महिला) बहूद्देश्यीय कार्यकर्ता मुहैया हो सकेंगे। काफी संख्या में ये कार्यकर्ता पहले ही प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। वे समन्वित स्वास्थ्य और परिवार कल्याण सेवाओं के मूल केन्द्र की तरह होंगे और गांवों में परिवार कल्याण सहित बुनियादी स्वास्थ्य कार्यक्रम की देख-रेख करेंगे। वे बीमारियों को रोकने, अच्छे स्वास्थ्य को बढ़ावा देने तथा जच्चा बच्चा की देख-भाल की तरफ विशेष ध्यान देंगे। कुछ ऊंचे स्तर पर, बहु-उद्देश्यीय—स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के कार्य का निरीक्षण स्वास्थ्य सहायकों द्वारा किया जाएगा। इन्हें भी प्रशिक्षण देने का कार्य पहले ही आरम्भ हो चुका है।

इस योजना के अतिरिक्त ग्रामवासियों के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने के लिए और भी कई कार्यक्रम शुरू करने का प्रस्ताव है। इन कार्यक्रमों को अन्तिम रूप दिए जाने के बाद मैं इन्हें जनता के सामने प्रस्तुत करूंगा। जहां तक शहरी क्षेत्रों का प्रश्न है—वहां मौजूदा कार्यक्रम जारी रहेंगे वैसे उन्हें भी सुचारू रूप देने और अधिक प्रभावपूर्ण बनाने की आवश्यकता है।

परिवार कल्याण के बारे में, मैं राष्ट्रपतिजी के भाषण को दोहराना चाहूंगा जो उन्होंने 28 मार्च, 1977 को संसद् के समक्ष दिया था—"परिवार नियोजन को एक ऐच्छिक कार्यक्रम तथा एक व्यापक नीति के अभिन्न अंग के रूप में ज़ोरदार ढंग से चलाया जाएगा जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, मातृ केन्द्र और बाल-कल्याण, परिवार कल्याण, महिला अधिकार और पौष्टिक आहार शामिल हैं।" इससे परिवार कल्याण कार्यक्रम के सम्बन्ध में केन्द्र सरकार की प्रतिबद्धता के बारे में सभी शंकाओं का निवारण हो जाना चाहिए। हम जिस बात के विरुद्ध हैं और जिसे हम कदापि प्रोत्साहन नहीं देंगे—वह है जबरन नसबंदी। इस मामले में जबरदस्ती सदा के लिए समाप्त कर दी जानी चाहिए। परिवार के आकार को सीमित रखने में जबरदस्ती के लिए कोई कानून नहीं बनाना चाहिए। हम परिवार कल्याण को भी उतना ही महत्व देते हैं जितना कि व्यक्ति की गरिमा को

राष्ट्रीय विकास में जनसंख्या एक महत्वपूर्ण तत्व है। इसमें अनियंत्रित वृद्धि परिवार व राष्ट्र के कल्याण में बाधा डालती है। मेरे दिमाग में इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि आमतौर पर हमारे लोग इसका महत्व समझते हैं। वे मां बाप की जिम्मेदारियों से वाकिफ हैं और यदि उनके लिए आवश्यक जानकारी और उचित सेवा उपलब्ध करायी जाए तो वे छोटे परिवार को अपनाने लगेंगे। आवश्तकता, छोटे परिवार के बारे में शिक्षित और प्रोत्साहित करने के लिए ज़ोरदार व निरन्तर कार्यक्रम चलाने की है। केन्द्र में हम इस कार्यक्रम को तेज़ी से चलाने की कोशिश करेंगे और इसे ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुंचाएंगे। हमें इस दिशा में सूचना और प्रसारण मंत्रालय के सभी प्रचार माध्यमों का पूर्ण सहयोग पहले ही मिल रहा है। हम इसके लिए दूसरे मंत्रालयों से भी सहयोग लेने का प्रयास कर रहे हैं। मुझे पूरी उम्मीद है कि राज्य सरकारें भी इस कार्यक्रम के पक्ष में अनुकूल वातावरण तैयार करने में अपने सभी प्रचार साधनों का सहयोग प्रदान करेंगी।

परिवार कल्याण और जच्चा-बच्चा के देखभाल कार्यक्रम के बीच पहले से ही काफी तालमेल है। हम इसे और भी मजबूत बनाने की कोशिश करेंगे। साथ ही हम इस बात की और भी ध्यान देंगे कि परिवार कल्याण और जच्चा-बच्चा देखभाल कार्यक्रम 'कल्याण' की हमारी विचारधारा के और अधिक अनुरूप बन सके जैसा कि राष्ट्र का लक्ष्य है।

पोषक आहार, भोजन, कपड़े, मकान, पीने का साफ पानी, शिक्षा, रोजगार व महिला कल्याण इन सभी और इनसे सम्बद्ध अन्य क्षेत्रों के लिए परिवार कल्याण उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि उनके लिए है। इनके आपसी संबंधों के महत्व को सभी स्वीकार करते हैं। मेरी यह कोशिश रहेगी कि इन मान्यताओं की ठोस कार्यक्रम में झलक मिले। मैं संबंधित मंत्रालयों से बात करूंगा कि वे अपनी सामान्य गतिविधियों के साथ परिवार कल्याण कार्यक्रम का समन्वय करने की कोशिश करें। उदाहरण के लिए यदि केन्द्रीय श्रम मंत्रालय और राज्यों के श्रम विभाग इस कार्यक्रम को अपनी श्रम कल्याण योजना के साथ समन्वय करें तो मैं नहीं समझता कि इसमें कोई अड़चन पैदा होगी। मुझे बताया गया है कि कुछ सीमा तक वे ऐसा कर भी रहे हैं। फिर

[शेष पृष्ठ 13 पर]

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण आवास व्यवस्था

बी०के० शर्मा, संयुक्त सचिव, ग्रामीण विकास विभाग

आन्ध्र प्रदेश के पल्लावाड़ा में हरिजनों के लिए आवास

आवास की आवश्यकता प्रमुख आवश्यकताओं में से एक है। इसलिए गांव वालों के लिए शुरू से ही स्वस्थ आवास के बारे में सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत पूरा बल दिया गया है, जिसमें कि एक तरफ तो वर्तमान मकानों में सुधार करने तथा दूसरी तरफ स्वच्छता के वातावरण को शुद्ध रखने व स्वास्थ्यकर आदतों को बढ़ावा देकर इस नीति को अपनाया गया था।

2. सामुदायिक विकास योजना कार्यक्रम में इन चीजों पर जोर दिया गया : पीने का शुद्ध व स्वास्थ्यकर जल, स्वच्छ स्नानागार व शौचालय, बिना धुंए का चूल्हा, रोशनदान, पक्के आंगन व गांव की पक्की गलियां, सड़क की बत्तियां, पानी की निकासी, खाद-मल दबाने के गड्ढे, मवेशियों के लिए पशुशालाएं आदि।

3. इतने प्रकार के कार्यक्रमों को अमल में लाने के लिए प्रत्येक विकास खंड में एक विस्तार अधिकारी नियुक्त किया गया है जो कि एक योग्यता प्राप्त कनिष्ठ इंजीनियर होता है और जो इस कार्यक्रम को लागू करने सम्बन्धी कार्यों की देखभाल करता है।

4. ऐसे शौचालय, जिनमें मल को जमीन के अन्दर सोखने की व्यवस्था होती है, स्वच्छ टट्टियों व स्नानागार आदि के सीधे सादे डिजाइन तैयार किए गए। खंड मुख्यालयों में इनके प्रदर्शन भी कराए गए। जहां कहीं ग्राम सेवकों के लिए आवासीय व्यवस्था की जा सकी, वहां ये सब सुविधाएं भी दी गई हैं ताकि गांव वालों को इनके लाभ का पता लग सके। इस नीति के अपनाने से इस कार्यक्रम के लोकप्रिय बनने में बड़ी मदद मिली और गांव के लोग बहुत बड़ी संख्या में इन कामों के बारे में जानकारी हासिल करने के लिए आने लगे।

5. इस कार्यक्रम का मूल आधार है परस्पर सहायता देना और आत्म निर्भरता। लोगों को निर्माण के लिए सामग्री और दूसरे आवश्यक तैयार माल के जुटाने में मदद दी गई। शौचालयों की स्वच्छता बनाए रखने के लिए पानी की सील की उपयुक्त व्यवस्था की गई। इसी प्रकार सीमेन्ट के बने बनाए रोशनदानों को आम जनता के लिए मुहैया किया गया। साथ-साथ सामुदायिक शौचालयों और स्नानागारों के निर्माण पर भी जोर दिया गया। इनके बनाने में 50% खर्च तो गांव वालों को देना पड़ा जो कि नकद रुपये, श्रम या अन्य रूप में था। शेष 50% व्यय सरकार ने दिया। इसके परिणाम स्वरूप यह कार्यक्रम बड़ा लोकप्रिय हुआ।

6. यहां इस कार्यक्रम के अन्तर्गत कुछ मदों को मोटे तौर से बताना उपयुक्त होगा :

(क) स्वच्छ शौचालय और स्नानागार :

गांव का आम आदमी खुले में नहाने का आदी था। आमतौर पर, गांव के कुएं के पास छोटे-से चबूतरे पर नहाता था। अब वह अपने घर के आंगन में ही स्नान करना पसंद करता है। कई जगहों पर, नियमित ढंग के स्नानगार बना दिए गए हैं। अब मुख्य समस्या फालतू पानी की निकासी की है। अनुभव से पता चला है कि गांव में खुली नालियां ठीक नहीं रहतीं। बैलगाड़ियों, मवेशियों आदि के चलने-फिरने से ये नालियां टूट जाती हैं या फिर इनमें धूल-कचरा भर जाता है और उनमें पानी रुक जाता है। तब इनकी सफाई और रख रखाव की भी एक समस्या हो जाती है। इस समस्या का हल तो ऐसे गड्ढे बनाने में है जहां पानी गिर कर जज्ब हो जाए। इस काम में विशेष सफलता नहीं मिल पाई यानी इसे अपनी लोकप्रियता नहीं मिली। हमारे इंजीनियरों, योजना निर्माताओं का कर्त्तव्य है कि वे इस समस्या का समाधान ढूंढ़े।

स्वच्छ शौचालयों की समस्या तो और भी जटिल है। गांव के अच्छे खाते-पीते और जागरूक लोग तो अपने अपने घरों में साफ-सुथरे शौचालय बनाना चाहते हैं। परन्तु अब तक कोई भी सही ढंग का डिजाइन तैयार न किया जा सका। अगर कोई बना भी तो उसकी लागत आम आदमी के बूते से बाहर है।

कई जगहों पर सामुदायिक शौचालय बनाने के प्रयत्न किए गए। परन्तु ये रहे आमतौर पर असन्तोषजनक। इनमें सबसे बड़ी समस्या इनके ठीक रख-रखाव व सफाई की रही है। कई तरह के डिजाइनों का परीक्षण किया गया जैसे बोरेथोन टाइप, फ्लश टाइप पर इस दिशा में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई। निस्संदेह सही ढंग के शौचालय स्वस्थ गांव के लिए एक अनिवार्य आवश्यकता है।

(ख) पानी की सप्लाई : गांवों के लिए स्वच्छ स्वास्थ्यकर पेय जल मुहैया करने पर संभवतः सबसे ज्यादा जोर दिया गया है। बहुत से कुएं और नलकूप बनाए गए हैं। पहाड़ी इलाकों में खेती से नलों के द्वारा पानी पहुंचाने की व्यवस्था की गई। कई जगहों पर सिंचाई की प्रायोजनाओं का भी लाभ उठाया गया है और उस पानी को पीने के पानी के रूप में इस्तेमाल किया गया है। कई जगहों पर नलकूप लगाए गए हैं। इनके लिए भी सरकार ने आर्थिक सहायता की है, फिर भी अभी बहुत से गांव हैं जहां पीने का साफ पानी सुलभ नहीं है। हाल में ही प्रधान मन्त्री ने घोषणा की थी कि आगामी पांच सालों में देश के सभी गांवों में स्वच्छ स्वास्थ्यकर पेय जल सुलभ होगा। ऐसी महत्वाकांक्षा तभी पूरी हो सकेगी जब कि गांव के सभी लोगों का इसमें भरपूर सहयोग मिले। वास्तव में यह काम तो एक जन-योजना के रूप में किया जाना चाहिए जिसमें सरकार भी भाग ले। हां, इस कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करने व इसे अमल में लाने के लिए खंड कर्मचारियों, इंजीनियरों अन्य लोगों का तो प्रमुख योगदान होगा ही।

(ग) पक्की गलियां और नालियां : गांवों की गलियों और नालियों को पक्का बनाने में बहुत लोगों ने दिलचस्पी ली है। हालांकि इस काम में भारी खर्चा होता है, फिर भी बड़े पैमाने पर इस कार्यक्रम को लागू किया गया और सफलता भी अच्छी मिली, परन्तु इनका रख रखाव कठिन कार्य है। कई जगह तो ऐसी हैं जहां पक्की गलियों या नालियों के बनने के बाद नामो निशान भी नहीं मिलता। इस पर बहुत गंभीरता से विचार किया जाना चाहिए कि क्या ऐसी कीमती प्रायोजनाओं को प्रोत्साहित किया जाए। यह सम्भव है कि शहर के पास वाले गांवों में या देश के समृद्ध इलाकों में इस तरह की योजनाओं के कार्यान्वियन की अब भी मांग हो। हमारा स्वप्न तो यह है कि देश के प्रत्येक गांव में साफ-सुथरी गलियां हों। इस दिशा में हमें गंभीरतापूर्वक विस्तार से अभी सोचना होगा और कोई कारगर नीति तैयार करनी पड़ेगी।

7. जिस किसी भी व्यक्ति का गांव के जीवन से कोई सम्बन्ध रहा हो वह यह अनुभव करेगा कि गांव वालों को अच्छे घर की तीव्र अभिलाषा होती है। दरअसल, वह समझता है कि मकान से उसकी हैसियत का पता चलता है। उसके कामों की प्राथमिकताओं में मकान का स्थान बहुत ऊंचा है। बैलों, खेती के औजारों आदि के बाद वह मकान पर ही गर्व करना चाहता है। इस प्रकार गांवों में मकान विकासमान समृद्धि का परिचायक है। पंजाब, हरियाणा, पश्चिम उत्तर प्रदेश के गांव तो छोटे-मोटे शहर से मालूम पड़ते हैं। करीब-करीब सभी मकान पक्की ईंटों के बने होते हैं। अगर आप उन्हें देखें तो यह बात साफ जाहिर हो जाएगी कि उन पर अच्छी-खासी लागत लगी होगी। यह कहना तो मुश्किल है कि उनके डिजाइन बढ़िया हैं या उनमें आवश्यक सुख सुविधाएं उपलब्ध हैं। पर इस निष्कर्ष पर पहुंचना भी गलत है कि गांव के लोग इन सुख सुविधाओं के प्रति उदासीन हैं। उसकी वास्तविक कठिनाई यह है कि कोई उसे सलाह देने वाला नहीं है कि ठीक ढंग का मकान कैसे बनाना चाहिए। इसके शिल्पी व इंजीनियर हैं—गांव का मिस्त्री और बढ़ई। बस यहीं तो जरूरत पड़ती है सरकारी तंत्र के सलाह मशवरे की। आदर्श मकानों के डिजाइन तैयार किए जाएं और वे ऐसे हों कि साधारण गांव वाले उन्हें बना सकें। गांव के मिस्त्री व बढ़ई को विशेष रूप से डिजाइन तैयार करने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। इस प्रकार के प्रशिक्षण के लिए कई केन्द्र राज्यों में हैं। इनका प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए सफलतापूर्वक उपयोग किया जा सकता है। जहां कहीं आवश्यक हो, बढ़ई व मिस्त्रियों के काम करने की जगहों पर भी अल्पकालीन प्रशिक्षण के लिए दल भेजे जा सकते हैं।

8. आजकल भी, बहुत सी जगहों में आवासके मकानों में ही मवेशियों के लिए गौशाला बनी रहती हैं। मवेशियों के लिए पशुशालाएं मकान से अलग, यथा-सम्भव दूरी पर होनी चाहिए। जहां मकान बनाने हों, पशुशालाओं की अलग व्यवस्था हो। पहले गांव के लोग छोटी-सी जगह में मिलजुल कर रहने के लिए मकान बनाना चाहते थे ताकि कई परिवार एक ही जगह रह सकें। इसके पीछे सुरक्षा की भावना हुआ करती थी। अब गांव वाले बाहर जाने लगे हैं। कई लोग तो अपने खेतों के पास रहना चाहते हैं। यह बात विशेष रूप से चकबन्दी वाली जगहों पर लागू होती है। इस प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलना चाहिए। वातावरण के सुधार में इस प्रकार भीड़-भाड़ को छितराना एक महत्वपूर्ण कदम है।

9. निर्माण और आवास मंत्रालय ने 1952 में गांव के आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के लिए सरकारी सहायता वाली आवास योजना और 1957 में ग्राम आवास योजनाएं चलाई थीं। परन्तु ऐसा मालूम होता है कि इन आवास योजनाओं को अमल में लाने वालों और विस्तार कर्मचारियों के बीच कोई विशेष तालमेल नहीं रहा। राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन इस समय गांव में मकान बनाने के कार्यक्रमों में सक्रिय दिलचस्पी ले रहा है। परन्तु दुर्भाग्यवश इस समय गांव की प्रायोजनाओं के अन्तर्गत सुख सुविधाएं प्रदान करने के निमित्त वित्तीय सहायता के लिए निधि की व्यवस्था नहीं है। इसमें संदेह नहीं कि यदि हम ग्रामवासियों के स्वस्थ जीवन के प्रति आश्वस्त होना चाहें, तो इन कार्यक्रमों को और मजबूती से अमल में लाने के लिए सरकारी सहायता की योजना को दोबारा चालू करने की आवश्यकता है।

अनु० राहुल उनियाल

भारत का संसदीय लोकतंत्र : खतरे और चुनौतियां

यतीन्द्र भटनागर

भारत की स्वतंत्रता के बाद जब संविधान का ढांचा तय हुआ और गणराज्य की स्थापना हुई तब विश्व में नव स्वाधीन विकासशील देशों में संभवतः भारत ही एकमात्र ऐसा देश था जिसने अपनी शासन प्रणाली को संसदीय लोकतंत्र का रूप दिया था। पुराने विकसित देशों में पश्चिमी विश्व के अमरीका, ब्रिटेन, कनाडा आदि देशों में अपने किस्म का लोकतंत्र था और बाद में जर्मनी, फ्रांस, जापान आदि देशों में भी लोकतंत्र की ही स्थापना हुई। यह बात और है कि जापान, ब्रिटेन, बेल्जियम, नीदरलैंड, स्वीडन आदि देशों में राजतंत्र होते हुए भी लोकतंत्र का व्यवस्थित स्वरूप अपने किस्म की अनोखी शासन प्रणाली है। भारत ने सोवियत पद्धति के एक दलीय शासन का समर्थन नहीं किया और राजतंत्र की स्थापना का तो यहां प्रश्न ही पैदा नहीं होता था।

संसदीय लोकतंत्र का संविधान तैयार करने में देश के दिग्गजों ने अपना श्रम और अनुभव तथा लोकतंत्री प्रणाली में अटूट विश्वास प्रकट किया था। देश में उस समय गांधी जी की दुःखद हत्या के बाद श्री नेहरू, कुछ वर्ष तक सरदार पटेल, मौलाना आजाद और अनेक अन्य राष्ट्रीय तथा प्रादेशिक स्तरों के धुरंधर नेता थे जो स्वयं जनसमर्थन से सम्मान के पदों पर पहुंचे थे। वे सर्वमान्य नेता थे, उन्हें जनता से स्नेह था, जनता से डर नहीं लगता था। ऐसी स्थिति में स्वतंत्रता के काल में उन्होंने आजादी और लोकतंत्र की स्थापना की जो बातें कहीं थीं उन्ही को अपने शासन काल में भारतीय जनता के भविष्य के लिए संविधान में स्थान देने का उनका संकल्प भी मूर्त हुआ। भारत में एक ऐसा संविधान तैयार हुआ जिसका उदाहरण शायद वह स्वयं ही हो सकता है। यह ठीक है कि उसमें विभिन्न देशों के आदर्श संविधानों की आत्मा थी और वह आधुनिक स्वरूप के लोकतंत्र का प्रतीक बना। लोकतंत्रात्मक गणराज्य का संविधान कुछ मूल आधारों को लिए हुए था जिनके सहारे गरीब देश में भी आधुनिक ढंग के लोकतंत्र की नींव पड़ी और कम से कम सिद्धान्त रूप में, कागज पर, समानता के आधार पर समाज रचना का कार्य शुरू हुआ।

संविधान पर गर्व

इस देश की जनता ने गरीब होते हुए भी, अपेक्षाकृत अनपढ़ होते हुए भी अपने स्वतंत्र लोकतंत्री संविधान पर सदा ही गर्व किया है। लोकतंत्र, वह भी संसदीय लोकतंत्र, का मूल सिद्धांत और आधार आम जनता का कल्याण, आम जनता का प्रतिनिधित्व और उसी जन साधारण के अधिकारों की स्थापना है। किसी विद्वान ने कहा है कि लोकतंत्र इस विश्वास पर आधारित है कि साधारण व्यक्ति में भी असाधारण संभावनाएं हैं व असाधारण गुण होते हैं। इसी कारण संसदीय लोकतंत्र में भाग लेने के लिए सभी को मताधिकार देकर नवभारत के निर्माण में सभी को हिस्सा देने की कल्पना की गई थी। लोकतंत्र को जनता राज, जनता के लिए और जनता द्वारा चलाया जाने वाला शासन भी कहा जाता है। लोकतंत्री संघर्ष के इतिहास में "जनता का जनता द्वारा और जनता के लिए" एक बहुत ही प्रसिद्ध नारा बन गया है और भारत में भी उसे अपना लिया गया है।

फ्रांस और अमरीका की क्रान्तियों ने भी भारतीय गणराज्य के उदय और उससे पहले स्वातंत्र्य के संघर्ष में हमें बहुत प्रेरणा दी थी। बाद में स्वतंत्रता और लोकतंत्र को मजबूत करने के लिए भी समानता, न्याय और कानून के शासन के आधार पर संसद् को अत्यधिक शक्तिशाली जन-संस्था मानकर भारतवासी अपने वर्तमान और भविष्य के प्रति निश्चिंत रहें। शायद यही निश्चिंतता ही उन्हें ऐसी स्थिति में ले गई थी जहां संसदीय लोकतंत्र के रहते हुए भी वे लोकतंत्र से वंचित होते जा रहे थे, स्वतंत्र होते हुए भी वे अपनी समूची स्वतंत्रताएं खो रहे थे और न्याय का ढांचा रहते हुए भी वे न्याय के शासन से दूर होते जा रहे थे।

शक्ति सम्पन्न कार्यपालिका

इसका एक कारण जहां संसदीय लोकतंत्र के संविधान की अपनी कमियां हो सकती हैं वहां इस लोकतंत्र के आधार-रूप तीनों अंगों में से किसी एक का अत्यंत शक्तिसम्पन्न होने का प्रयत्न भी है। कार्यपालिका (सरकार) न्यायपालिका और विधायिका (संसद व विधान सभाएं) इन तीनों अंगों में से कार्यपालिका ही शक्तिशाली होने के लिए असाधारण कदम उठा सकती है और शेष दोनों को अपने इशारे पर चलने के लिए बाध्य कर सकती है। संसद और अदालतें एक सीमा तक तो प्रतिरोध कर सकती हैं (सिद्धांत रूप में तो अंत तक संघर्ष कर सकती हैं) परन्तु यदि कार्यपालिका सीमा से बाहर जाने की कोशिश करती है और उसके लिए संविधान की आत्मा या भावना नहीं बल्कि शब्दों का सहारा लेती है तो अन्य दो अंग कुछ अधिक नहीं कर पाते। उन्हें विवश होकर कार्यपालिका के आगे झुकना पड़ता है जबकि संविधान की यह मंशा नहीं थी।

पिछले कुछ वर्षों में भारत में जो कुछ हो रहा था वह संसद की प्रभुसत्ता के नाम पर कार्यपालिका के ही अधिकार बढ़ाने और स्वयं संसद् और न्यायपालिका के अधिकार और कर्तव्यों को गौण बनाने का कार्य था। इससे कौन इन्कार करता है कि संसद ही जनता की प्रतिनिधि संस्था है—उसी के सदस्यों में से प्रधान

मंत्री और मंत्रिमंडल की नियुक्ति होती है और उसी तथा राज्यों के चुने हुए विधान मंडलों की राय से ही राष्ट्रपति का चुनाव होता है जो देश का सर्वोच्च, आदरयोग्य वैधानिक अध्यक्ष होता है। संविधान के अनुसार शासन का वही सर्वोच्च नेता होता है परन्तु संसदीय लोकतंत्र की एक विशेषता यह भी है कि प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा निर्वाचित संसत्सदस्यों (लोक सभासदों) के नेता को ही प्रधानमंत्री के रूप में सर्वाधिक अधिकार होते हैं।

एकछत्र राज

यह प्रधानमंत्री चाहे तो संविधान की सभी व्यवस्थाओं के होते हुए भी अपना एकछत्र शासन कायम करने की दिशा में प्रभावी कदम उठा सकता है। यही प्रधानमंत्री चाहे तो राष्ट्रपति को केवल मुहर लगाने वाला नाममात्र का राष्ट्रपति बनाकर रख देता है। यही प्रधानमंत्री संसद की सत्ता के मूल और मर्म को भूलकर उसे भी अपनी ही इच्छा की पूर्ति का साधन बना सकता है और इस प्रकार समूचे संविधान की, न्याय व्यवस्था की उपेक्षा कर अपना निरंकुश शासन चला सकता है। उस पर नियंत्रण वैसे तो मंत्रिमंडल के अन्य साथी, संसद स्वयं और राष्ट्रपति भी कर सकते हैं परन्तु सब सिद्धांत रूप में ही रह पाता है, कार्य रूप में, व्यवहार में अन्य सभी प्रधानमंत्री के आगे असहाय होकर लोकतंत्र से तानाशाही की ओर प्रगति को विवश होकर देखने के अलावा और कुछ नहीं कर सकते अन्यथा संविधान का 82 वां संशोधन जैसा व्यापक व दूरगामी कदम न उठ पाता।

परन्तु यह विवशता भी कोरी सैद्धांतिक है। संविधान के अनुसार, जिसमें 42 वां संशोधन के बाद व्यवस्था और भी स्पष्ट कर की दी गई है, राष्ट्रपति को मन्त्रिमंडल की राय से ही काम करना होता है—उसके सामने और कोई विकल्प नहीं है। मंत्रि-मंडल की राय राष्ट्रपति के सामने प्रकट करने के लिए प्रधान मंत्री ही सामान्य सूत्र है। यों तो हर मंत्री को राष्ट्रपति के पास जाने उन्हें अपनी स्पष्ट राय से अवगत कराने का अधिकार है परन्तु व्यवहार में जब प्रधानमंत्री ही अधिक शक्तिशाली होने लगता है तो अन्यों के अधिकार अपने आप में कम होने लगते हैं जैसा कि पिछले कुछ वर्षों में हुआ था। वैसे तो कहा जाता है कि मंत्रिमंडल में जहां सामूहिक नेतृत्व, सामूहिक उत्तरदायित्व की व्यवस्था है, प्रधानमंत्री भी मंत्रिमंडल का एक सदस्य मात्र है—केवल बैठकों की अध्यक्षता करता है और सभी के कामकाज में तालमेल रखता है। परन्तु व्यवहार में वह सब बराबर वालों से अधिक बड़ा हो जाता है। यदि वह धीरे-धीरे सभी मंत्रियों के बारे में गोपनीय जानकारी संग्रह करके सरकारी जासूसी व्यवस्था को अपने अधिकार बढ़ाने के लिए प्रयोग करते हुए और धन आदि की शक्ति से अपनी ही ताकत बढ़ाने लगता है तो उसे प्रसन्न करने के प्रयत्न करने वाले तो क्या अन्य भी पूर्णतः साष्टांग की मुद्रा में आ जाते हैं। संसद् के साथी सदस्यों को अनेक प्रकार से भयभीत कर, प्रलोभन देकर, अपने पक्ष में करने के प्रयत्न भी काफी सीमा तक सफल हो जाते हैं और फिर तो एकछत्र राज का किसी का भी सपना साकार होने लगता है।

इसमें दो ही बातें हैं, जो बड़ी चुनौती के रूप में सामने आ जाती हैं। वह हैं समय पर चुनावों की व्यवस्था और विपक्षी दल। जैसा कि हाल के वर्षों में भारत में सामने आया समय पर चुनाव तो स्थगित कराने की व्यवस्था हो गई और कुछ समय के लिए विपक्ष का भी मुंह बंद कर दिया गया। परन्तु ये कदम कुछ समय तक तो बहुत ही प्रभावी रहे और यहां तक कि अनेक देशी-विदेशी लोकतंत्रवादियों को भी मानना पड़ा कि भारत में जैसा अनुशासित लोकतंत्र चल रहा है वह बहुत सफल और कुछ अर्थों में आदर्श है। दूर से असलियत तो दिखाई देती नहीं थी, वैसे निकट वालों को असलियत की तह में पहुंचना आसान नहीं था। ऐसी स्थिति में ऊपर से संसदीय लोकतन्त्र होते हुए भी अन्दर से तानाशाही और लोकतन्त्र के विपरीत एकतंत्र की सी स्थिति थी जिसे संसद का पूरा समर्थन प्राप्त था यानी सत्ताधारी बहुमत प्राप्त दल का।

"विपक्ष अनावश्यक" विपक्ष का "बन्दोबस्त" तो किया जा सकता है और वह भी पूरी तरह संविधान की व्यवस्थाओं के अनुसार। पिछली घटनाओं के पक्ष में यही तर्क दिया था कि जो कुछ हुआ संविधान के अनुसार ही हुआ। यह भी व्यवस्था है कि यदि राष्ट्र के लिए कोई अत्यन्त आवश्यक, अनिवार्य और तत्काल ही किया जाने वाले कार्य हो तो उसके लिए प्रधानमन्त्री को बिना मन्त्रीमन्डल की स्वीकृति के स्वयं राष्ट्रपति से किसी भी ऐसे अध्यादेश पर हस्ताक्षर कराने और बाद में मन्त्रिमन्डल की स्वीकृति लेने का अधिकार है। यह संविधान के शब्द है, आत्मा और भावना नहीं। अब इसका फैसला भी तो करना होगा कि क्या वह देश के इतना आवश्यक, अनिवार्य, तत्काल होने वाला और इतना विकट है जिसके लिए मन्त्रिमन्डल की स्वीकृति के बिना ही प्रधानमन्त्री अपना कदम उठा सकते हैं तथा वह अधिकार उन सामान्य कार्यों के लिए है। जहां किन्हीं कारणों से मन्त्रीमन्डल की बैठक तत्काल नहीं बुलाई जा सकती अथवा और किसी कारण से उसे मन्त्रिमण्डल के सामने रखकर उसकी स्वीकृति लेना महज औपचारिकता ही हो? मुझे याद है कि 1971 में दिसम्बर की तीन तारीख को जब पाकिस्तान ने भारत पर बड़े पैमाने पर, युद्ध छेड़ दिया था तब तक भी मन्त्रि-मंडल ने ही युद्ध की घोषणा करने से पहले अपनी बैठक में इस विषय पर विचार किया। फिर आपात-स्थिति की घोषणा क्या एक साधारण विषय था जिसपर मंत्रिमंडल की पूर्ण स्वीकृति अनावश्यक थी।

प्रस्तुत प्रसंग में गृह मन्त्रालय के रेकार्ड से स्पष्ट है कि मन्त्रिमंडल की स्वीकृति बाद में ली गई। यह व्याख्या करना अन्यों का काम है कि आपात स्थिति जैसे असाधारण कदम से पहले मंत्रिमंडल में विचार आवश्यक था या प्रधानमंत्री को ही वह सब अधिकार मिले हुए थे। वर्तमान प्रसंग में यह भी माना जा सकता है कि मंत्रिमंडल पहले विचार का अवसर पाने पर संभवतः उसकी स्वीकृति ही दे देता क्योंकि उसकी शक्ति पहले ही से क्षीण कर संसदीय लोकतंत्र को कमजोर कर दिया गया

था। फिर भी संविधान की भावना की रक्षा भी आवश्यक होती है, केवल शब्दों की नहीं।

जनता के कर्तव्य

विपक्ष की भूमिका को जब लोग अनावश्यक करार देने लगे तो लोकतंत्र का महत्व रह जाता है। फिर लोकतंत्र में यदि जनता के अधिकारी के बजाय उसे उसके कर्तव्यो का ही बोध कराने की प्रथा चल पड़ी तो सरकार के कर्तव्य का बोध कौन कराएगा। जब भी कोई किसी का प्रतिनिधि बनने का प्रयत्न करता है तो इसीलिए कि भविष्य में वह अपने ऊपर जनता के कल्याण की सारी नहीं तो प्राय; सभी जिम्मेदारियां स्वयं ले रहा है। उसका काम अपने निर्वाचकों के अधिकारों की रक्षा करना है, न कि उन्हें कर्तव्यों की याद दिलाते हुए अपने दायित्व को टाल देना है। संसदीय लोकतंत्र में जनता जागरुक होती है अपने अधिकारों के लिए, उसकी जिम्मेदारियों की याद दिलाकर कोई शासक अपने कर्तव्यों से विमुख नहीं हो सकता।

न्यायपालिका के प्रसंग में एक बात ध्यान देने योग्य है, वह है कानून का शासन। यह सही है कि न्यायपालिका स्वयं देश का सर्वोच्च शासक नहीं परन्तु उसका कार्य संविधान की व्याख्या करना, कानून का शासन बनाए रखना और संसद तथा कार्य-पालिका की मनमानी पर अंकुश रखना भी तो है। इसी कर्तव्य और अधिकार से उसे किसी प्रकार वंचित करना, कमजोर, करना संसदीय लोकतंत्र की भावना के विपरीत है। ऐसा करने से लोकतंत्र की जड़े कमजोर होती हैं जैसा कि कुछ समय पहले दिखाई देने लगा था।

लोकतंत्र में जनता को ही सर्वोच्च माना जाता है। लोकतंत्र का अर्थ है कि मैं आपसे अधिक अच्छा हूं, परन्तु आप भी मुझसे अधिक अच्छे हो सकते हैं।" फिर लोकतंत्र में यदि लोक, जनता का शासन है तो उसे बोलने की, अपने विचारों को अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता होती है। यहां तो संसदीय लोकतंत्र के सामने ऐसी विचित्र स्थिति आ गई थी कि जनता तो कमजोर, कम अधिकारों वाली और उसके चुने हुए संसद तथा उनकी चुनी हुई सरकार सबसे अधिक शक्तिशाली हो गई। एक और भी विचित्र स्थिति प्रेस पर सेंसर की वजह से बन गई जब जनता को अपने चुने हुए प्रतिनिधियों के संसद में दिए गए भाषणों की रिपोर्ट मिलनी बंद हो गई। संसद में सदस्य जो भी कहें वह सेंसर होकर जनता के पास जाए! दूसरे शब्दों में चुने हुए सदस्य या चुने मंत्री की बजाय सरकारी अफसर—सैंसर अधि-कारी—अधिक शक्तिशाली हो गया था।

मंत्री पर सेंसर

मुझे याद है कि प्रेस क्लब की सभा में तत्कालीन सूचना और प्रसारण मंत्री (जिनके विभाग में सेंसर विभाग भी आता था) का वक्तव्य भी सेंसर द्वारा पास कराए बिना छापने पर पाबंदी लगा दी गई थी। ऐसी घोषणा भी उन्हीं मंत्री जी के बैठे हुए की गई जिसे मंत्री जी ने सिर झुका कर सुना—माना। यह कैसा लोकतंत्र था।

किसी विद्वान ने कहा है कि लोकतंत्र में जो खराबियां हैं उनकी तुलना में एकतंत्र, अधिनायकवाद की खराबियां तो बहुत ही बुरी है। दूसरे का कहना कि है लोकतंत्र की बुराइयों को और अधिक लोकतंत्र से ही दूर किया जा सकता है। संसदीय लोकतंत्र का भारतीय चलन भी उसी प्रकार का है जिसकी बुराइयों को, जिसकी कमियों को, लोकतंत्र के और अधिक निष्ठावान प्रयोग, परीक्षण और क्रियान्वयन से ही दूर किया जा सकता है। हाल के चुनावों से पहले सत्ताधारी दल की ओर से कहा जाता था कि गरीब देश के लिए लोकतंत्र और संसदीय लोकतन्त्र की पुरानी परम्परा आवश्यक नहीं, वह बहुत खर्चीली है, ऐश-आराम की चीज है. गरीब देश की जनता को तो रोटी चाहिए, लोकतन्त्र का मतलब वह क्या जाने।

लोकसभा के मार्च में हुए चुनावों ने इन सभी बातों को गलत सिद्ध कर दिया। लोकतन्त्र और स्वतन्त्रता गरीब जनता के लिए भी उतनी ही आवश्यक है जितनी अमीर के लिए। आजादी से सांस लेना अमीर देश की जनता का ही एकाधिकार नहीं है। लोकतन्त्र की स्थापना के बाद, संसदीय प्रणाली के इतने ऊंचे कीर्तिमानों की स्थापना के बाद कोई इसे नष्ट करने या अपनी तानाशाही स्थापित करने के लिए देश की जनता को अपने अनुसार चलाना चाहे तो प्रयत्न तो कर सकता है परन्तु जनता की जागरुकता उसे वैसा करने से रोक सकती है।

अभिव्यक्ति की आजादी

लोकतन्त्र में अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता पहली है, कानून का शासन आवश्यक है और साधारण नागरिक और प्रधानमन्त्री के सामान्य अधिकार भी समान होते हैं। बिना इन्हें माने लोकतंत्र की जड़ें मजबूत नहीं हो सकतीं और कोई उनकी उपेक्षा करने का प्रयत्न करेगा तो इस देश का संसदीय लोकतन्त्र इस चुनौती को स्वीकार कर उसे अच्छा सबक सिखा सकेगा इसमें कोई संदेह नहीं। परन्तु इसके लिए जहां जनता को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक रहना होगा वहां संसद के सत्ताधारी दल को भी किसी भी कार्यपालिका द्वारा अपने की आवश्यकता से अधिक शक्तिशाली बनते देखकर उसी प्रकार का विरोध करना होगा जैसा विपक्षी दल करता है। लोकतन्त्र की स्वस्थ परम्पराओं, संसदीय लोकतन्त्र के सिद्धांतों और जनता के अधिकार की रक्षा के लिए दलीय आधार पर नहीं बल्कि लोकतन्त्र में आस्था रखने के ऊंचे आदर्शों के अनुसार सत्ताधारी और विपक्षी दलों को समान विचार रखने होंगे। संसदीय लोकतन्त के सामने अनेक चुनौतियां आई हैं और भविष्य में आ सकती हैं—यद्यपि नई सरकार ने इन अधिकारों को छीनने वाले कानूनों के विरुद्ध संघर्ष छेड़ा हुआ है—परन्तु जागरुक जनता और सिद्धान्तों की रक्षा के लिए सजग संसद उनका सफलता से मुकाबला कर सकती है। लोकतन्त्र ही ऐसी व्यवस्था है जिसमें सभी नागरिकों की शक्ति का समुचित उपयोग हो सकता है, जिसमें सभी नागरिक अपने शासन में हिस्सेदार होने का गर्व कर सकते हैं। किसी भी राष्ट्र की शक्ति इसी में निहित होती है। ★

खाद्यान्नों का भण्डारण

वसन्त कुमार

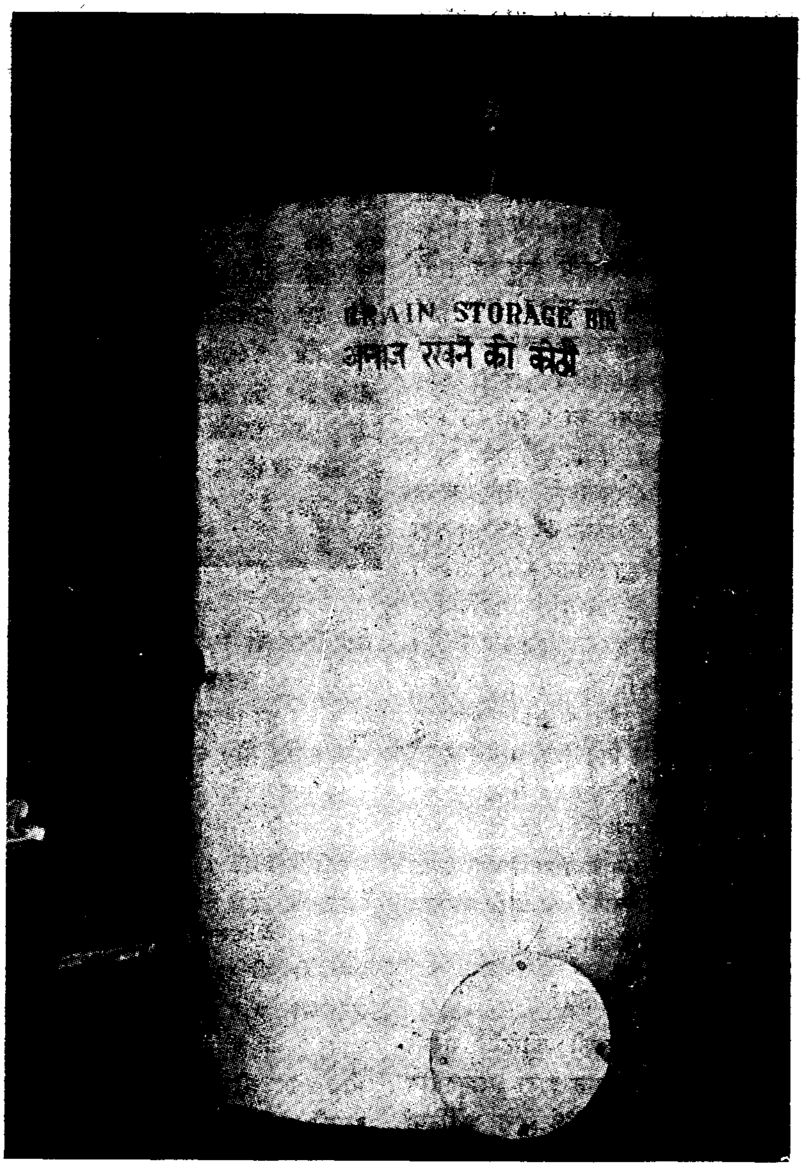

(भा० कृ० अ० प०)

गत दशक के आरम्भ से देश में कृषि के सफल अनुसंधान कार्यों के लाभप्रद परिणाम स्पष्ट होने लगे थे। कृषकों द्वारा उर्वरकों, कीटनाशी दवाओं, समुचित सिंचाई साधनों तथा अधिक उपज देने वाले बीजों के प्रयोग स्वरूप खाद्यान्नों में निरन्तर वृद्धि हुई। वर्ष 1970-71 में खाद्यन्नों का उत्पादन जहां लगभग 10 करोड़ 84 लाख टन था वहां 1975-76 में बढ़कर लगभग 12 करोड़ 8 लाख टन हो गया। खाद्यान्नों की समस्या काफी हद तक हल हुई मगर उनके रख रखाव व भण्डारण की सुविधाओं में उपज के अनुपात में सुधार न हो सका हालांकि इस ओर भी सुधार के प्रयास निरन्तर जारी रहे। पिछले वर्ष तो यह समस्या और भी गम्भीर हो गई जब विवश होकर खाद्य निगम द्वारा स्कूली इमारतों, निजी भवनों तथा राज-भवनों को अनाज के गोदामों के रूप में इस्तेमाल करना पड़ा।

आज भी भारतीय किसान के पास भण्डारण की सुविधाओं का भारी अभाव है। ऐसा उसके आर्थिक रूप के कमजोर होने के कारण है। वे अपने गल्ले को उन समुचित परिस्थितियों में नहीं रख पाते जो नितांत आवश्यक है। नतीजा यह होता है कि नमी की अधिकता, चूहों और कीड़े मकोड़ों व अन्य कारणों से भारी मात्रा में अन्न नष्ट हो जाता है या उसके गुणों में कमी आ जाती है।

वर्ष 1969 में पैस्टीसाइड एसोसिएशन आफ इण्डिया के छठे अधिवेशन की रिपोर्ट के अनुसार देश में बढ़िया गोदामों के अभाव में खाद्यान्नों का लगभग 20 प्रतिशत यानी पांचवा भाग अपर्याप्त भण्डारण परिस्थितियों के कारण यूंही नष्ट हो जाता है जिसका मूल्य लगभग 14 अरब रुपये के आसपास बैठता है।

भारत सरकार द्वारा विभिन्न स्तरों पर होने वाली हानि का अनुमान लगाने के लिए नियुक्त समिति द्वारा पेश की गई रिपोर्ट के अनुसार 1967-68 में लगभग 93 लाख टन खाद्यान्न की क्षति केवल गलत भण्डारण के कारण से ही हुई। लगभग 60 लाख टन अनाज चिड़ियों, चूहों तथा कीड़े मकोड़ों द्वारा नष्ट कर दिया गया। रिपोर्ट में आगे बतलाया गया कि गलत भण्डारण के कारण न केवल अनाज की भारी मात्रा नष्ट हो जाती है बल्कि दानों का स्वाद उनके गुण, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, अमीनो अम्लों तथा विटामिनों का भी ह्रास होता है। उक्त रिपोर्ट को ध्यान में रखकर 1975 में नयी दिल्ली में आयोजित, भारतीय खाद्य निगम, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा वैज्ञानिक व औद्योगिक अनुसंधान परिषद् की एक संयुक्त गोष्ठी में कटाई मड़ाई के बाद खलिहानों व भण्डारों में होने वाली खाद्यन्नों की हानि से बचने के उपायों की खोज और उन्हें तत्काल अमल में लाने की सिफारिश की गई।

प्रचलित विधियां

कुछ समय पहले तक हमारे गांवों

तथा शहरों से किसानों और गल्ला व्यापारियों के यहां अनाज रखने के लिए बड़ी-बड़ी जमीदाज़ खत्तियां इस्तेमाल में लायी जाती थी। इन खत्तियों के जमीन में बना होने के कारण भूमिगत नमी तथा कीड़े मकोड़ों से अधिकांश मात्रा में गल्ला खराब हो जाता था। रासायनिक परिवर्तनों के कारण अनाज में बदबू आ जाती थी। दानों की अंकुरण शक्ति का ह्रास हो जाता था जमीदाज़ खत्तियां बनाने का मुख्य कारण गल्ले को केवल चोरों आदि से सुरक्षित रखना था। यह तरीका नितांत त्रुटिपूर्ण तथा हानिप्रद था। इसके बाद गल्ला रखने के लिए कच्चे गोदामों तथा कोठियों का प्रचलन बढ़ा जो अपेक्षाकृत बेहतर पाया गया। लेकिन विकसित ढंग के आधुनिक कोठियां व गोदाम उनसे भी बेहतर सिद्ध हुए हैं। ग्रेन रिसर्च इंस्टीट्यूट हापुड़ (उ० प्र०) और भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नयी दिल्ली द्वारा विकसित अनाज रखने की कोठियां काफी लाभप्रद सिद्ध हुई हैं। इन कोठियों में भण्डारित अनाज लम्बी अवधि तक सामान्य अवस्था में बना रहता है। लोहे की चादर से बनी कोठियां विभिन्न साइजों में प्राप्त है।

(भा० कृ० अ० प०)

सस्ती पूसा कोठियां

इस्पात व लोहे की कोठियां मंहगी होती है। पूसा संस्थान द्वारा अलकाथीन की चादरों और कच्ची ईटों से कोठियां तैयार करने की विधि विकसित की गई हैं। उनका बनाना बहुत आसान है। हमारे किसान अपने इस्तेमाल के लिए उन्हें आसानी से बना सकते हैं। कोठियों को पक्के फर्श पर बनाया जाता है ताकि चूहों से अनाज को हानि न हो सके। लगभग 2000 कि. ग्रा. की क्षमता वाली कोठी के बनाने पर लगभग 75 रु० की लागत आती है।

ऐसी कोठियां बनाने के लिए पहले कड़ी जमीन पर कच्ची ईटों का एक 162 से० मी० लम्बा, 122 से० मी० चौड़ा और 7 से० मी० ऊंचा चबूतरा बनाया जाता है। चबूतरे पर 700 गेज की 174 सेंटीमीटर लम्बी तथा 134 सेंटीमीटर चौड़ी अल्काथीन चादर बिछाई जाती हैं। चबूतरे पर बिछी अल्काथीन के चादर की किनारियां चबूतरों के चारों और 6 सें० मी० बाहर निकाल दी जाती हैं। चादर के उपर फिर से 162 सें० मी० लम्बी और 122 से० मी० चौड़ी कच्ची ईटों की 7 सें० मी० मोटी तह बिछा दी जाती है।

बाद में कच्ची ईटों से ही ढांचे की अन्दरुनी दीवार बनायी जाती है। अन्दरुनी भाग इस तरह तैयार किया जाता है कि अन्दर की लम्बाई 140 सें० मी० और चौड़ाई 100 सें० मी० रहे। इसकी ऊंचाई 160 सें० मी० रहे, ढांचे की अन्दरुनी सतह पर अच्छी तरह पलस्तर कर दिया जाता है और ढांचे के ऊपर 166 सें० मी० लम्बी, 126 सें० मी० चौड़ी, 180 सें० मी० ऊंची अल्काथिन की खोली को सावधानी से ढांचे पर चढ़ा दिया जाता है।

अल्काथीन की खोली को इतने नीचे तक लाया जाता है कि वह आधार पर बिछी अल्काथीन की चादर से मिल जाए। दोनों चादरों के सिरों को आपस में तापबन्द कर दिया जाता है। बाद में समूची कोठी के बाहर चारों ओर पक्की ईटों की दीवार बना दी जाती है। पक्की ईटों की दीवार बनाने का कारण कोठी की दीवारों की सूराखों को, चूहों, गिलहरी तथा अन्य कीडों से बचाना है ताकि वे उसमें छेद न कर सकें। कोठी के निर्माण के समय उसमें ऊपर और नीचे की ओर गल्ला भरने और निकालने के लिए समुचित आकार के सूराख बना दिए जाते है। बाद में इन्हें भली भांति सील कर दिया जाता है ताकि नमी अन्दर गल्ले तक न पहुंच सके। भली भांति सूखने के बाद कोठी में अच्छी तरह सुखाया हुआ अनाज भर दिया जाता है। इस प्रकार की कोठियां सस्ती होती हैं व उन्हें बनाने के लिए मंहगी सामग्री भी नहीं खरीदनी पड़ती। किसान को केवल अल्काथीन की चादर व कुछ पक्की ईटें ही खरीदने पर खर्चा करना पड़ता है।

हानिकर कीड़े

गोदामों तथा कोठियों में रखे अनाज पर इस कीड़े का भयंकर रूप से आक्रमण होता है। अन्य खाद्यन्नों, चावल, मक्का, बाजरा, ज्वार तथा दालों के लिए भी यह उतना ही हानिकर है। आटा पीसने की बड़ी-बड़ी मिलों तथा आटा गोदामों में भी इनसे भारी नुकसान उठाना पड़ता है। हल्के भूरे रंग का यह कीड़ा लगभग 2-3 मिली मीटर लम्बा होता है। इन कीड़ों का जीवन चक्र लगभग 35-40 दिन में पूरा हो जाता है। यानी थोड़े से समय में ही एक नई पीढ़ी तैयार हो जाती है। मादा कीड़े अनाज और आटे

के बीच अण्डे देती है जिनसे नन्ही-नन्ही सूड़ियां निकलती हैं, लगभग 4 सप्ताह में सूड़ियां प्यूपा बन जाती हैं तथा एक सप्ताह में वयस्क कीड़े, प्यूपा से बाहर आ जाते हैं। ये कीडे जुलाई से सितम्बर तक यानी जब मौसम नम होता है, गल्ले को भारी हानि पहुंचाते हैं।

सूंडवाला घुन गल्ले तथा आटे के लिए अत्यन्त हानिकर होता है। इसे चावल का घुन भी कहते हैं। चावल के अलावा यह घुन गेहूं, जो, मक्का, ज्वार, बाजरा आदि को भारी हानि पहुंचाता है। कीड़े का मुंह सूंड के आकार का होता है। इसकी सूंड़ियां तथा वयस्क दोनों ही गल्ले के लिए हानिकर हैं। वयस्क कीड़े लाल भूरे रंग तथा ढाई से तीन मिली मीटर तक लम्बे होते हैं। मादा धुन दानों में छेद कर वहां एक बार में ही 250 तक अण्डे देती है। अण्डों से निकली सूंड़ियां दानों में घुसकर अन्दरूनी सामग्री को खा जाती हैं। इसका जीवन चक्र लगभग पांच छः सप्ताह में पूरा हो जाता है। केवल एक ही मादा कीट से 3 महीने में 20 लाख तक कीड़े तैयार हो जाते हैं।

बिना सूंड वाले धुन की दोनों ही अवस्थाओं अर्थात सूंडियां व वयस्क से अनाज को हानि पहुंचती है। इनका आक्रमण गेहूं, जों, चावल ज्वार, मक्का, दाल, आटा, मैदा, बिस्कुट आदि पर होता है। वयस्क मादा एक बार में 300 से 500 तक अण्डे देती है। इस कीडे का जीवन चक्र लगभग दो-तीन महीने में पूरा हो जाता है।

अन्न के पतंगे के वयस्कों से गल्ले को हानि तो नहीं होती परन्तु सूंडियां अत्यधिक हानिकर होती हैं, गेहूं, चावल, मक्का, ज्वार, बाजरा तथा आटे आदि को भी भारी क्षति होती है। पतंगे का रंग भूरा व परों पर रोएं होते हैं। मादा कीडे-गल्ले गोदामों तथा खेतों में भी अण्डे देती हैं जिससे एक सप्ताह में ही सूंडियां निकल आती हैं। सूंडियां दानों में घुस जाती हैं तथा दो तीन सप्ताह में वहीं प्यूपों में बदल जाती हैं।

गोदामों तथा कोठियो में अनाज को भरने से पहले उनमें 0.5 प्रतिशत बी० एच० सी० मैलाथियान अथवा डी० डी० टी का छिड़काव कर लेना चाहिए। 10 वर्ग मीटर स्थान के लिए 0·5 लीटर दवा काफी रहती है। बोरों में रखे गए अनाज के ऊपर प्रति वर्ग मीटर के स्थान में 5 प्रतिशत का 250 ग्राम बी० एच० सी० का छिडकाव लाभप्रद पाया गया है। इसमें कीडों की काफी रोकथाम हो जाती है। खपरा, सूंडियां तथा सुरसरियों की रोकथाम दवाओं के चूर्ण से नही हो पाती, अतः ऐसी स्थिति में गैस वाली दवाएं इस्तेमाल करनी चाहिए। इथाइ-लीन डाई क्लोराइ व कार्बन टेट्राक्लो-राइड का छिड़काव बन्द गोदाम में डेढ़ किलोग्राम प्रति 100 धन फुट स्थान के हिसाब से करना आवश्यक है। फास्टो-क्सीन की गोलियां भी कीडों की रोक-थाम के लिए काफी उपयोगी सिद्ध हुई है। एक गोली का वजन 3 ग्राम होता है जिससे लगभग 1 ग्राम जहरीली गैस निकलती है। एक टन अनाज के उपचार के लिए एक गोली काफी रहती है। इस गोली के इस्तेमाल के बाद गोदाम को दो-तीन दिन तक बन्द रखना जरूरी होता है। ★

ग्रामीणों के स्वास्थ्य········[पृष्ठ 5 का शेषांश]

भी अभी इस दिशा में बहुत कुछ करना है। इसी प्रकार जो अन्य मंत्रालय कल्याण कार्यों में लगे हुए हैं उन्हें भी परिवार कल्याण कार्यक्रम की ओर विशेष ध्यान देना होगा। गर्भ-निरोध के बहुत से उपाय प्रचलित हैं। हम उन सबको बराबर प्रोत्साहन देंगे। केवल नसबंदी ही परिवार कल्याण नहीं है, तथापि नसबंदी आपरेशन की सुविधाएं उनके लिए मुफ्त रहेगी जो स्वेच्छा से ऐसा करवाना चाहें। गर्भ निरोधक के परम्परागत उपायों और लूप जैसी विधियों पर भी बराबर ध्यान दिया जाएगा। इनके साथ-साथ हम "ब्रह्मचर्य" और "इन्द्रिय-निग्रह" की प्राचीन धारणाओं को भी प्रोत्साहन देंगे।

भारत की जनसंख्या दस लाख प्रति माह की दर से बढ़ रही है। वर्तमान जन्म दर करीब 34.5 प्रति हजार है। हमारा लक्ष्य इसे घटाकर मार्च, 1979 तक 30 प्रति हजार और मार्च, 1984 तक 25 प्रति हज़ार तक लाने का है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमें हर संभव प्रयास करना होगा परन्तु हम प्रेरित करने के रास्ते पर चलेंगे। हम अपने प्रयासों के अतिरिक्त उन लोगों का सहयोग प्राप्त करने की भी कोशिश करेंगे जो जनमत को बनाने में सहायक हो सकते हैं। इस कार्यक्रम के साथ मजदूर संगठनों, वाणिज्य मंडलों, सहकारी समितियों, महिला संगठनों, शिक्षक संघों और ग्राम पंचायतों का पूरा सहयोग लिया जाएगा। हम यह भी आशा करते हैं कि ये संगठन राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखते हुए स्वेच्छा से आगे आएंगे।

अंत में, मैं परिवार कल्याण कार्य-क्रम और ग्रामीण स्वास्थ्य योजना के पारस्परिक गहरे संबंधों पर जोर देना चाहूंगा। ये दोनों एक दूसरे के पूरक हैं और इन्हें एक दूसरे से शक्ति प्राप्त करनी चाहिए। इन दोनों को एक साथ रखकर चलने से स्वास्थ्य सुधार और जनसंख्या वृद्धि की समस्याओं को हल करने में महत्वपूर्ण सहायता मिलेगी। यह इस दिशा में पहला कदम है और साधन उपलब्ध होने पर और भी बहुत से उपाय किए जाएंगे। आवश्यकता इस बात की है कि हम जो भी योजना बनाएं उसे हर स्तर पर पूरी निष्ठा और कुशलता से लागू करें। इन योजनाओं के साथ जन सहयोग लेने से हमारी स्वास्थ्य-सेवा नीति के संबंध में जो खामी रही है वह काफी हद तक दूर हो जानी चाहिए। मैं आशा करता हूं कि इस तरह का जन-सहयोग जनता के स्वास्थ्य की देखभाल का काम जनता के हाथों सौंपने की प्रक्रिया का शुभारम्भ सिद्ध होगा। ★

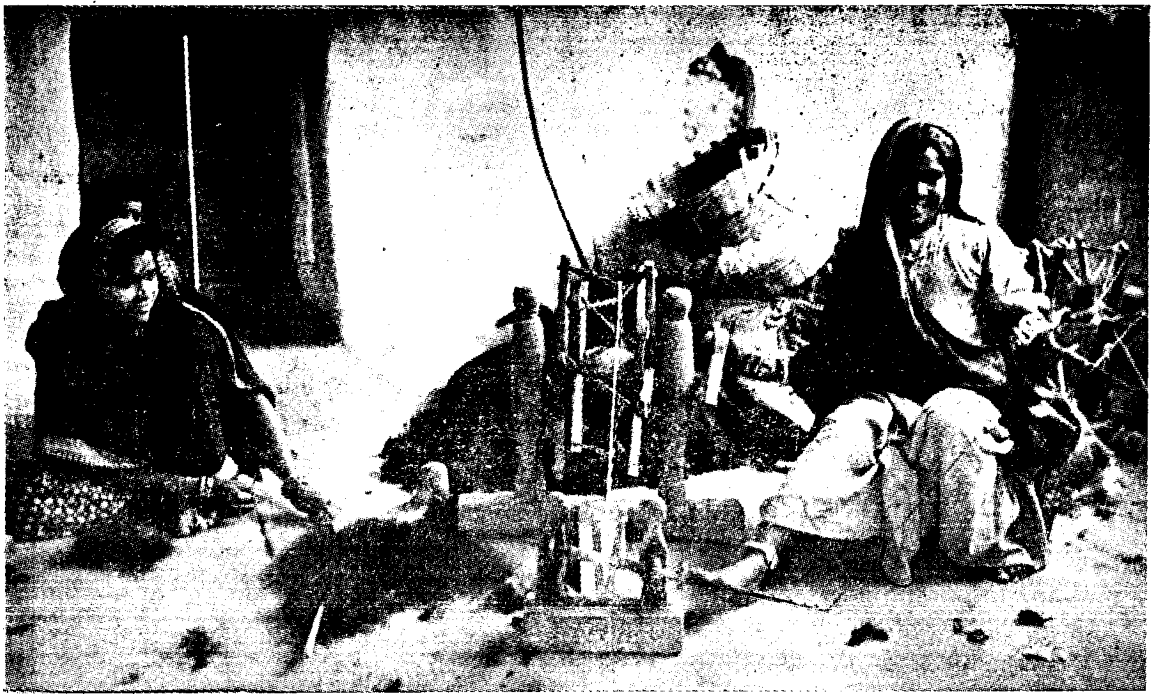

लघु उद्योग ही बेरोजगारी व गरीबी दूर करने में समर्थ

अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार

दरिद्रता की रेखा के नीचे इस समय 42 करोड़ जन जीवन यापन कर रहे हैं। गरीबी की कल्पना इस एक बात से की जा सकती है कि अंग्रेजी दैनिक पत्र की एक प्रति का मूल्य 35 पैसे है। एक खेतिहर मजदूर अपने परिवार को जीवित रखने के लिए प्रतिदिन 37 पैसे खर्च करता है। स्पष्ट है—अंग्रेजी दरिद्रता, असमानता और विषमता उत्पन्न करती है। यह शहरों और देहाती जीवन के मध्य भारी विषमता उत्पन्न करती है।

अंग्रेजी इस देश से विदा ले इसके वास्ते तो व्यापक जन-क्रान्ति की—मध्यम वर्ग को नहीं, आवश्यकता है। पर क्रान्ति खाली पेट तो होगी नहीं। इस वास्ते सामान्य जन में शक्ति और सामर्थ्य के ज्ञान उत्पन्न करने के लिए ऐसे ग्राम उद्योगों का विकास और प्रसार करना चाहिए जो केवल दोनों जून पेट भरने योग्य अन्न ही न दें बल्कि ग्राम निवासी को स्वावलम्बी, स्वाभिमानी भारतीय बना दें। खादी की चर्चा है। पर पिछले 50 साल का अनुभव है कि खादी एक सहायक उद्योग भर है। सरकारी संरक्षण पाकर भी यह उद्योग स्वावलम्बी नहीं हो सका। जब उद्योग ही स्वावलम्बी नहीं तो खादी वाला स्वावलम्बी और स्वाभिमानी कैसे हो सकता है ? किसी एक व्यक्ति के प्रति भक्ति उत्पन्न करके कोई उद्योग सफलता पूर्वक नहीं चलाया जा सकता। हां, भारत भक्ति उत्पन्न कर भारतीय परम्परा की रक्षा करने की आवश्यकता बता कर उद्योग सफलतापूर्वक चलाया जा सकता है।

इस दृष्टि से गौ-पालन, बकरी पालन भारत राष्ट्र के जीवन को पुष्ट करने के लिए आवश्यक ही नहीं है, वरन विश्व का बाजार पाने और भारत राष्ट्र को स्वावलम्बी बनाने में सहायक हैं। डेनमार्क, हालैंड, नीदरलैंड, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड की अर्थव्यवस्था का मूलाधार डेरी उद्योग है जो इसका मूल है। इसके बढ़ने से ही अन्य उद्योगों को इन देशों ने अपनाया है। इन उद्योगों को स्थापित करनेके लिए इन देशों ने पूंजी किसी अन्य देश से नहीं मांगी। इन्होंने किसी के सामने हाथ नहीं फैलाया।

यह ठीक है कि यूरोप-अमेरिका के बाजार, पनीर-मक्खन से परिपूर्ण हैं। भारत के वास्ते इसमें प्रवेश पाना सरल नहीं। किन्तु निरुत्साहित और हतोत्साहित होने की आवश्यकता नहीं।

भारतीय आहार की विविधता, इसको विश्व-बाजार में स्थान दिलाने में समर्थ है। प्रातराश तथा ब्रेकफास्ट के समय प्रत्येक रेस्टोरां में और प्रत्येक घर में इस आहार के लिए प्रचार कर स्थान बनाना सम्भव है। भारतीय दुनिया भर में फैले हुए हैं, यह इसके सबसे बड़े विज्ञापन होंगे। रसगुल्ला, सन्देश, चमचम, पेड़ा, बरफी, कलाकन्द, गुलाबजामुन, बालूशाही, लड्डू या मोदक आदि सैकड़ों मिठाइयां इस देश में बनती हैं और खपती हैं। इसी प्रकार नमकीन, कचौड़ी, समोसा, मठरी, निमकीन दालमोठ, चिवड़ा, चना-मुरमुरा, दाल-सेब आदि बनते हैं। मेवा, खोवा और घी गाय का होना चाहिए। गाय के घी में बनी चीजें देर तक रहती हैं। भैंस के दूध में एक प्रकार की हीक होती है। इससे यह ठीक नहीं होता। भैंस का दूध एक मात्र भारत में पाया जाता है। माल बेचना है तो दूसरों की रुचि का विचार करना चाहिए। 'अमुल' इसी कारण अपना मक्खन निर्यात नहीं कर सका। उसके परीक्षण भैंस के मक्खन से हीक दूर न कर सके। गाय फिर भारतीय संस्कृति, भारतीय परम्परा और आर्य जाति को विजयी बनाने वाली है। गाय के दूध से बनाई चीज अधिक दिन तक टिक सकती हैं। कचौड़ी महीना भर तक रह जाती है। रबड़ी, खुरचन, मावा छः छः मास तक रह जाते हैं।

भारत के पांच राज्यों में ये उद्योग फैले हुए हैं और सफल हैं। पुष्टिदायक वस्तुएं होनी चाहिए। पैकट या डब्बे सुन्दर और आकर्षक होने चाहिएं। आहार-मूल्य लिखा होना चाहिए। विटामिन, वगैरह कौन से और किस मात्रा में है यह भी लिखा होना चाहिए।

इस आहार को खाकर भारत एक अरब 83 वर्षों से जीवित है। भारतीय आहार की शक्ति को पहिचानिए।

लैटिन अमेरिका बसाने वाले भारतीयों के पूर्वजों के वंश आज भी लाखों की संख्या में जीवित हैं।

अकेले यूरोप में ही 5 लाख भारतवंशीय हैं। इनकी भारत भक्ति अडिग है। ये दाल-चपाती या दालभात खाते हैं। यूरोपीयन बड़े पेशरी आदि खाते हैं क्योंकि यह उनके विजेताओं का आहार है। मेक्सिको और पेरु भारतीय आहार को राष्ट्रीय आहार मानते हैं क्योंकि इन देशों को सर्वप्रथम भारत या सूर्यवंशियों ने बसाया था।

भारत भक्ति अपेक्षा करती है कि हम गौ की सेवा करें और भारतीय आहार की शक्ति का दुनिया को परिचय दें। यदि हम यह करेंगे तो भारत को किसी से मदद न मांगनी पड़ेगी। गौ का महत्व बढ़ेगा।

निःस्संदेह इसके लिए व्यापक संगठन आवश्यक है। आहार-व्यवस्था उत्तम होनी चाहिए। यह न भूलना चाहिए कि अमेरिका ने जब से डब्बा बन्द खाद्य बेचना शुरू किया तब उसने उद्योगीकरण की ओर पग बढ़ाया।

डेरी उद्योग का भाग मुर्गी पालन भी है। दूसरा सूअर पालन है।

अण्डों की मांग अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में है। हैदराबाद का समाचार है—मई से हैदराबाद से सीधे विमान 'गल्फ' और मध्य पूर्व के अन्य देशों को जायेंगे। हैदराबाद का हवाई अड्डा राष्ट्रीय से अन्तर्राष्ट्रीय हो गया है। यह व्यवस्था विशेष रूप से अण्डों को जल्दी से जल्दी शेखों के देश में पहुंचाने के लिए की गई है। प्रति मास 200 टन अण्डे भेजे जायेंगे। विदेशी मुद्रा 17 लाख की मिलेगी। आन्ध्र प्रदेश का अण्डा-उत्पादन में भारत भर में पहला स्थान है। प्रति दिन 28 लाख अण्डे मिलते हैं। इसका दो-तिहाई भाग हैदराबाद-सिकन्दराबाद और इन दोनों शहरों के आस-पास के कुक्कुट-फार्मों से आते हैं। भारत में प्रतिदिन 100 जनों के पीछे 13 अण्डे खपते हैं। इसका अर्थ है कि 1100000 अण्डे फालतू हैं। इनके वास्ते बाजार ही नहीं।

भारत में अण्डे का सबसे बड़ा बाजार बम्बई है। यहां प्रतिदिन 6-7 लाख अण्डे बिकते हैं। ये कलकत्ता-मद्रास से बस परिवहन से प्रतिदिन यहां आते हैं। कहना न होगा कि बस ने यह सम्भव कर दिया है।

अण्डे का सर्दियों में 34 से 37 पैसे भाव रहता है। गर्मियों में 28 से 30 पैसा रहता है। अक्तूबर-दिसम्बर, 1976 में 250000 मुर्गियां खरीदी गईं। ये पक्षी अब अण्डे देने लगेंगे। अनुमान है, ये 6 से 10 लाख अण्डे प्रतिदिन देंगे। यह उद्योग हैदराबाद-सिकराबाद दोनों शहरों में केन्द्रित है।

अण्डों के निर्यात की सम्भावना से मुर्गी पालन उद्योग को भारी प्रोत्साहन मिला है। 'इकनामिक' डवलपमेंट कौंशिल' ने प्रति अण्डा 25 पैसे देने के लिए कहा है। यह बम्बई के बाजार से आठ पैसे कम हैं। निर्यात कर की वापिसी से प्रति अण्डा 4.5 पैसे और कम में मिलेगा।

अण्डों के लिए पश्चिम एशिया में बाजार है। ईरान ने 1974-75 में 28 करोड़ अण्डों का आयात किया पर 1976 में 48 करोड़ अण्डों का आयात किया। हैदराबाद से सम्भवतः 8000000 अण्डे भेजे जा सकेंगे।

सूअर के बाल, मांस, चर्बी नसें-नाड़ियां सब कुछ इसका बिकता है। पर अमेरिका आदि देश सूअर को अनाज पर पालते हैं। इस उद्योग के विकास की बहुत सम्भावनाएं हैं। कम पूंजी से चलाया जाने वाला एक और ग्राम उद्योग हैं, देश में कीड़े पालने के लिए शहतूत के पेड़ लगाने होंगे। यह उद्योग पर्वतों और तराई में विकसित हो सकता है।

त्रिपुरा में दक्षिणी भाग में विश्राम गंज है। यह एक कस्बा है। इसके निवासियों ने रेशम के कीड़े पालने का निश्चय किया है। इससे ये अपना भविष्य उज्ज्वल बनाने की आशा करते हैं। मलबारी एक्सटेंशन-सेंटर' 20 एकड़ में है। इसके मध्य मिट्टी के रोले एक पंक्ति में आयताकार नालियां (पंजीरी) के वास्ते बनाये गए हैं। इसने यहां के निवासियों के जीवन को एक नया रूप दिया है।

यहां लगाए-गए पौधों से कलमें ले जाकर नजदीक के खेत में बोये जाते हैं। जब ये खिलते हैं तो शहतूत के पत्ते रेशम के कीड़े पालने के लिए तैयार हो जाते हैं। रेशम के कीड़े पालने का उद्योग कुछ का सहायक उद्योग हैं और कुछ का यह मुख्य धन्धा है। विश्राम गंज में एक्टेंशन सेंटर की स्थापना 1975 में की गई थी। उत्तर-पूर्वी क्षेत्र में आर्थिक-विकास और सम्भावनाओं को ध्यान में रख कर इसकी स्थापना की गई है।

रेशम के कीड़े पालने के लिए, सादा साज-सामान चाहिए,। टोकरियां चाहिए। 180 किलोग्राम कोकून चाहिए। किसान स्वतः इसका सूत बना लेता है। यहां केवल शहतूतों का ही नहीं अपितु मूंगा, टसर, आदि का भी और विकास किया जाएगा।

विश्राम गंज को साफ करना होगा। यहां घना जंगल है। यहां शहतूत के पेड़ नहीं है। शहतूत की खेती से यह समस्या हल हो जाएगी।

इस समय इनके आस-पास के 120 जनों ने रेशम-उद्योग को अपनाया है। इनके प्रयास से 142 एकड़ जमीन में अब शहतूत के खेती होने लगी है। 1977 का निर्धारित लक्ष्य 4000 किलोग्राम रेशम उपलब्ध करना है। इसका अर्थ है कि रेशम के कीड़े पालने वाले 60000 रुपए कमा लेंगे। अधिकांश रेशम के कीड़े पालने वाले इस काम को शौकिया कर रहे हैं।

स्पष्ट है कि भारत की दरिद्रता को दूर करने का उपाय ग्राम-विकास को प्रोत्साहन न देना है।

खेती पर भार पहले ही बहुत हैं। उस पर और भार बढ़ाने से गरीबी दूर न होगी। क्या इस को स्वीकार किया जाएगा। ★

इतिहास सदन,
239 पंडारा रोड,
नई दिल्ली-110001

सहकारी वितरण के माध्यम से ग्रामीण समृद्धि

आर० एस० उमरे

शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण की आवश्यकता काफी समय से महसूस की जाती रही है। यद्यपि समय-समय पर ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारी समितियों के माध्यम से उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण के लिए कुछ कदम उठाए गये, किन्तु क्रमबद्ध-प्रयास नहीं किए गए। राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम ने पहली बार, ग्रामीण क्षेत्रों में आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने की क्रम-बद्ध योजना प्रारम्भ की है।

इस योजना के अर्न्गतत विपणन समिति, थोक उपभोक्ता स्टोर अथवा उपभोक्ता विपणन संघ की शाखाओं को धन के रूप में सहायता प्रदान की जाती है ताकि वे ग्रामीण समितियां उपभोक्ता वस्तुओं के क्रय, संचय एवं वितरण के लिए बैंकों से चालू पूंजी बढ़ाने में समर्थ हो सकें। छोटी समितियों की केन्द्रीय समिति को "शीर्ष समिति" अवथा 'मुख्य समिति' कहा जाता है। इसको यह नाम इसलिए दिया गया क्योंकि क्रय, मूल्यांकन, संचय एवं प्रदर्शन आदि जैसे वितरण के कार्यों में यह समिति आगे रहती है। 50,000 रु० तक की सीमा के धन के अतिरिक्त यह शीर्ष समिति, व्यापार के लिए आवश्यकता पड़ने पर, वाहन खरीदने के लिए 60,000 रु० की राशि भी प्राप्त कर सकती है। सामान्यत: एक शीर्ष समिति से 10 लाख रु० के वार्षिक कार्य-व्यापार संभाले जाने की आशा की जाती है जो न्यूनतम संभावित कार्य-व्यापार है। यह अनुभव किया गया है कि जिस समिति का 10 लाख रु० अथवा इससे अधिक का कार्य व्यापार है, वह एक वाहन खरीदने की स्थिति में होती है। वाहन प्रदान करने का अभिप्राय है कि शीर्ष समिति अपनी सम्बद्ध ग्रामीण समितियों की आवश्तकताओं को पूरा कर सकें। आशा है कि माल पहुंचाने के लिए शीर्ष समिति, एक कार्यक्रम बनाएगी। शीर्ष समिति का वाहन आपूर्ति केन्द्र के मुख्य कार्यालय तक सामान ले जाने में भी सहायक सिद्ध होगा।

यदि समिति के पास वाहन नहीं है तो उसे किराए की गाड़ी पर आश्रित रहना पड़ता है। शीर्ष समिति के कार्य-कलापों की वृद्धि में वाहन सहायक सिद्ध हो सकता है। आदिवासी एवं पिछड़े पर्वतीय क्षेत्रों में, जहां साप्ताहिक हाट लगाए जाते हैं, ये गाड़ियां माल लाद कर चलती-फिरती दुकानों का कार्य कर सकती हैं। तथापि यह अग्रणी समिति पर निर्भर करता कि वह वाहन का कितना उपयोग कर सकती है। रा० स० वि० नि० की, शीर्ष समिति के लिए सहायता 75% ऋण एवं 25% अनुदान के रूप में होगी। समिति को ऋण तथा ब्याज 14 वार्षिक किश्तों मे अदा करना होगा। यद्यपि ब्याज की दर अधिक नहीं है तथा ऋण के भुगतान की शर्तें भी उदार हैं, फिर समिति को अपने कार्य-व्यापार को बढ़ाने के लिए प्रयास करने होंगे ताकि वह वाहन के अनुरक्षण से सम्बन्धित दायित्व को निभाने की स्थिति में रहे।

अग्रणी समिति के खुदरा एवं थोक व्यापारों के संचालन के लिए उपयुक्त कर्मचारी नियुक्त करने होंगे। समिति को अपने मुख्य कार्यालय में एक दुकान खोलनी होगी और वहां माल स्टाक करके अपनी समितियों को माल की पूर्ति भी करनी होगी। यथा समय सेल्समैन को, यदि प्रशिक्षित नहीं तो, प्रशिक्षण देना होगा। उनके प्रशिक्षण के लिए सहकारी प्रशिक्षण कालेजों तथा प्रशिक्षण केन्द्रों, में विशेष निर्दिष्ट पाठ्यक्रम आयोजित किए गए हैं। ग्रामीण उपभोक्ता कार्य एक विशिष्ट प्रकार का कार्य है तथा शीर्ष समिति को चाहिए कि इस प्रयोजन के लिए एक पृथक् अनुभाग तथा पृथक् से लेखा खोले। वर्तमान में, ग्रामीण उपभोक्ता व्यापार से सम्बन्धित अग्रणी समिति एवं ग्रामीण समितियों का लेखा अलग-अलग नहीं रखा जाता है और न व्यवस्थित रुप से लिखा जाता है। अत: समितियों को सुझाव दिया जा रहा है कि इस प्रयोजन के लिए उचित लेखा बही रखें। पुस्तिकाएं, जिनमें स्थानीय भाषाओं में लेखे की विधि वर्णित है, तैयार की जा रही हैं तथा यथासमय समितियों को भेज दी जाएंगी।

जनवरी 1976 में रा० स० वि० नि० द्वारा चालू की गई योजना के अन्तर्गत भी कहा गया है कि यदि किसी क्षेत्र में प्राथमिक उपभोक्ता स्टोर द्वारा खुदरा स्टोर नहीं खोला गया है तो शीर्ष समिति एक खुदरा स्टोर खोलेगी। इसका मुख्य उद्देश्य है कि उस क्षेत्र के उपभोक्ताओं की आवश्यकता को पूरा किया जाए। यह आशा की जाती है कि खुदरा तथा थोक विक्री, दोनों ही रूपों में समिति के कार्यकलापों से, कीमतों एवं किस्म पर प्रभाव पड़ेगा।

इसके अतिरिक्त, शीर्ष समिति एवं ग्रामीण समितियों, दोनो के उपभोक्ता कार्यों का मुख्य उद्देश्य वितरण पर प्रभाव डालना है। यह व्यापार व्यवस्थित किया जाएगा जिससे समितियां, बिना किसी रुकावट के आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं की पूर्ति की स्थिति में निरन्तर बनी रहें। इस प्रयोजन के लिए राज्य सरकारों तथा इस कार्य में रत अन्य संस्थाओं को सुनिश्चित करना होगा कि सेवा सहकारी समितियों को नियमित रुप से आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति होती रहे।

सेवा समितियां जिनका मुख्य कार्य, ग्रामीण जनता को आवश्यक उपभोक्ता वस्तुएं उपलब्ध कराना है, इस योजना के

सफल कार्यान्वियन में विशिष्ट भूमिका रखती हैं। कई सेवा समितियां, जो शीर्ष समिति से सम्बद्ध हैं, ग्रामीण क्षेत्रों में उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण में एक आवश्यक भूमिका निभाती हैं। उन्हें अल्प मूल्य समितियों के साथ प्रभावी रूप से सम्बद्ध रहना होगा तथा उनसे माल की उपलब्धि करनी होगी। प्रत्येक समिति को ध्यान रखना होगा कि वह शीर्ष समिति से ही माल खरीदेगी, तथा जहां तक शीर्ष समिति से माल खरीदने का सम्बन्ध है, पूर्ण रुप से नियमों का पालन करेगी। यदि खुले बाजार में कम कीमतों पर वस्तुएं उपलब्ध हों तो ग्रामीण समितियां, शीर्ष समिति के परामर्श से, खुले बाजार से माल खरीद सकती हैं। ऐसी स्थिति में शीर्ष समिति, माल खरीद कर, और भी कम कीमतों पर अपनी सम्बन्ध समितियों को उपलब्ध करा सकती है। ग्रामीण समितियों तथा अग्रणी समिति के प्रतिनिधियों के मध्य नियमित बैठकें होंगी और इस प्रकार वे एक दूसरे को ठीक से समझ सकेंगे तथा इनसे दोनों के बीच सहयोग स्थापित होगा जो इस योजना के सफल कार्यान्वियन के लिए आवश्यक है।

रा० स० वि० नि० की योजना के अन्तर्गत, एक ग्रामीण समिति अपनी खुदरा दुकानों को पट्टे, आलमारियां, तराजु आदि के लिए 75% ऋण, 25% अनुदान के रूप में 5,000/- रु० तक की निधि प्राप्त कराएगी। ग्रामीण समिति को कभी-कभी खाने का तेल तथा मिट्टी का तेल स्टाक करने के लिए बड़े बर्तन अथवा ड्रम खरीदने पड़ते हैं। रा० स० वि० नि० की योजना के अन्तर्गत प्राप्त निधि से ऐसी आवश्यक वस्तुएं खरीदी जा जा सकती हैं। सामान्यतः ग्रामीण समिति की दुकान किराए के गोदामों में स्थित होती है। यह अच्छा होगा यदि उनके पास अपने छोटे गोदाम तथा शो रूम हों। इस प्रकार की सुविधाओं वाले गोदामों के निर्माण के लिए रा० स० वि० नि० की सहायता उपलब्ध है। यह आवश्यक है कि दुकानें मुख्य बाजार केन्द्रों में स्थित हों न कि दूरस्थ क्षेत्रों में जहां उपभोक्ता को पहुंचने में कठिनाई हो, तथा इसी कारण वह सामान खरीदने के लिए सहकारी दुकानों पर जाने से कतराए।

ग्रामीण क्षेत्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए, बाजार तथा माल दोनों ही स्तरों पर, सहकारी समितियों द्वारा उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण में आशाजनक प्रगति नहीं हुई तथापि इस क्षेत्र में हुई प्रगति काफी उत्साहजनक है क्योंकि दोनों विपणन तथा ग्रामीण समितियों ने ग्रामीण उपभोक्ता व्यवसाय अपने निजी साधनों से किया। 1974-75 के दौरान 3, 262 प्राथमिक विपणन समितियों तथा 1,56,000 ग्रामीण/सेवा समितियों में से 1,894 प्राथमिक समितियां तथा 51,388 ग्रामीण सेवा समितियां, ग्रामीण क्षेत्रों में उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण के कार्य में लगी हुई थीं। वर्ष के दौरान इन समितियों ने लगभग 400 करोड़ रु० के मूल्य की उपभोक्ता वस्तुओं का वितरण किया। कुछ राज्यों जैसे, गुजरात, केरल तथा महाराष्ट्र की सहकारी समितियों ने अकेले ही कुल 400 करोड़ रु० में से 207 करोड़ रु० के मूल्य का विपणन किया जो 52% है।

पांचवी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक सहकारी समितियों द्वारा ग्रामीण उपभोक्ता व्यापार का लक्ष्य 600 करोड़ रु० निर्धारित किया गया है। इस लक्ष्य तक पहुंचने के लिए यह आवश्यक है कि ग्रामीण क्षेत्र में उपभोक्ता वस्तुओं की पूर्ति के लिए प्रभावी एवं नियमित माध्यम अपनाया जाए। अतः इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए रा० स० वि० नि० की सहायता की योजना मुख्यतः आदिवासी तथा पिछड़े क्षेत्रों में उपभोक्ता व्यापार को प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तरों पर बढ़ावा देने तथा इस लक्ष्य की पूर्ति में सहायता प्रदान करने के लिए पथ प्रदर्शन करती है।

रा० स० वि० नि० ने अभी तक विभिन्न राज्यों में 201 परियोजनाओं के लिए 2.31 करोड़ रु० स्वीकृत किए हैं। इन परियोजनाओं में ग्रामीण क्षेत्रों में उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण में कार्यरत 4,000 ग्रामीण समितियां सम्मिलित हैं। मार्च 1977 तक रा० स० वि० नि० द्वारा 1 करोड़ रु० और संस्वीकृत किए जाने की आशा है। वास्तव में यह वित्तीय सहायता, लक्ष्य प्राप्ति का साधन है। नियमित आधार पर ग्रामीण जनता को आवश्यक उपभोक्ता वस्तुएं उपलब्ध कराना ही मुख्य लक्ष्य है। ऐसी आशा की जाती है कि रा० स० वि नि०, राज्य सरकारों और स्वयं सहकारी समितियों के इस बहुमुखी प्रयास से ग्रामीण उपभोक्ता कार्यक्रम उन बृहद् क्षेत्रों में पहुंच जाएगा जिनमें कमजोर वर्गों की बहुतायत है। एक बार ऐसा होने से ग्रामीण उपभोक्ता व्यापार की प्रणाली में क्रान्तिकारी परिवर्तन आएंगे जिससे अन्ततः देश के ग्रामीण क्षेत्र में समृद्धि के एक नए युग का प्रारम्भ होगा। ★

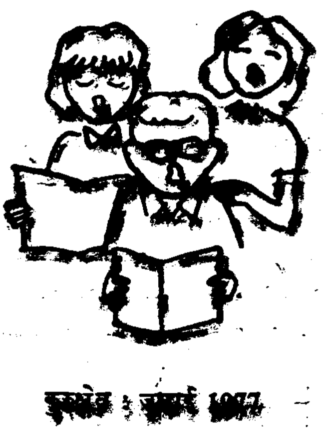

खुम्बी उगाएं, आमदनी बढ़ाएं

ए० आर० पटेल

बहुत पुराने जमाने से मनुष्य खाने के लिए जंगली खुम्बियों को चुनता आ रहा है। लेकिन इसकी खेती, विशेषतः व्यापारिक स्तर पर, हाल ही में शुरु की गयी है। अनुकूल मौसम वाले क्षेत्रों के किसानों के लिए आमदनी बढ़ाने का यह एक नया जरिया बन गयी है। थोड़ी लागत और बहुत कम देखभाल से भी छोटे और सीमांत किसान इसकी खेती शुरु करके इससे अच्छी आमदनी प्राप्त कर सकते हैं। इस लेख में खुम्बी की लाभदायक खेती से संबंधित जानकारी दी गयी है।

भिन्न-भिन्न ऐतिहासिक कारणों से अब तक केवल खाद्यान्नों दालों और तिलहनों तथा रेशे वाली नकदी फसलों के आर्थिक पहलुओं पर ही विचार-विमर्श किया जाता रहा है। इसके अलावा, वैज्ञानिक खेती की दृष्टि से केवल मैदानी इलाकों में उगायी जाने वाली फसलों को ही महत्व दिया गया। इनकी वजह से अपरम्परागत फसलें, विशेषतः पहाड़ी इलाकों में उगायी जाने वाली फसलें, उपेक्षित रहीं। इसी संदर्भ में यहां खुम्बी की खेती पर विचार किया गया है।

मनुष्य के लिए खुम्बी कोई नयी चीज नहीं है। बहुत पहले से आबादी के आस-पास के इलाकों में अपने आप स्वभाविक रुप से उगने वाली खुम्बियों को मनुष्य खाने के लिए खोजता आ रहा है। सन् 1950 के पहले कृत्रिम परिस्थितियों में खाद्य खुम्बियों की खेती करने की जानकारी नहीं थी। इस फफूंद की लगभग 2000 खाद्य किस्में अपने देश में होती हैं, लेकिन संगठित तरीके से खुम्बी की खेती हाल ही में शुरु की गयी है। यह अगारिकस बिस्पेरस, लेंटिनस इडोड्स, फ्लूरोटस आस्टिएटस और वाल्वेरिला वाल्वेसिया जैसी किस्मों पर आधारित हैं, जिन्हें कृत्रिम परिस्थितियों के अंतर्गत बड़े पैमाने पर सफलता पूर्वक उगाया जा सकता है। हमारे देश में केवल अगारिकस, फ्लूरोटस और वालवेरिया किस्मों को ही सफलता पूर्वक उगाया गया है।

बड़ी संभावनाएँ

(भा० कृ० अ० प०)

इस खुम्बी की मांग में बहुत तेजी से बढ़ोतरी हुई है। संसार भर में खुम्बी का कुल उत्पादन 1967 में 2 लाख 50 हजार मीट्रिक टन था। खुम्बी का सबसे अधिक निर्यात करने वाला देश ताइवान है। इसका निर्यात 1961 में 23,000 मीट्रिक टन से कुछ कम था, जो 1969 में बढ़कर 37 हजार मीट्रिक टन हो गया। इससे उसे 3 करोड़ डालर की आमदनी हुई। इसका बाजार और भी विस्तृत होता जा रहा है तथा आशा है कि 1976 तक ताइवान से डिब्बाबंद खुम्बियों का निर्यात बढ़कर लगभग 58 हजार मीट्रिक टन हो जाएगा। इस प्रकार हमारे देश में भी व्यापारिक स्तर पर खुम्बियों की खेती को बढ़ाने और विकसित करने की बड़ी संभावनाएं हैं, ताकि घरेलू उपभोग और निर्यात की मांगों को पूरा किया जा सके। अत्यधिक पोषण-गुणों के कारण इधर हमारे देश में भी खुम्बियों की मांग तेजी से बढ़ रही है। अतः यदि खुम्बी के लिए उपयुक्त क्षेत्रों और इसकी वैज्ञानिक खेती के तरीकों पर उचित अनुसंधान किया जाए तो भारतीय अर्थव्यवस्था में विशेषतः छोटे और सीमांत किसानों के लिए, खुम्बियों की खेती बड़ी लाभदायक साबित होगी।

अगारिकस बिस्पेरस, जिसे आमतौर पर "सफेद बटन जैसी खुम्बी" कहते हैं, की खेती हिमाचल प्रदेश और जम्मू व कश्मीर में व्यापारिक स्तर पर की जाती है। सरकार यहां पर ताईवान के समान ही खुम्बियों की खेती को घरेलू उद्योग के रुप में बड़े पैमाने पर विकसित करना चाहती है। यहां की प्राकृतिक परिस्थितियां भी इतनी अनुकूल हैं कि खुम्बियों की खेती बड़े पैमाने पर आसानी से शुरु किया जा सकती है।

खुम्बियां कश्मीर घाटी के, विशेषतः ग्रामीण क्षेत्रों के सैकड़ों परिवारों की आमदनी का नया जरिया बन गयी हैं। सरकारी सूचनाओं के अनुसार किसानों, बेरोजगार युवकों और सेवा

निवृत्त अधिकारियों ने इसकी खेती करके लाभ कमाना शुरु कर दिया है। सीमांत किसानों ने 1000 रु० खर्च करके लगभग 3000 रु० सालाना आमदनी प्राप्त कर ली। अधिक साधन वाले किसानों ने तो बड़े-बड़े "खुम्बी घर" बना कर 20 हजार रु० तक की सलाना कमाई की। सारा उत्पादन डिब्बाबंद करके निर्यात कर दिया जाता है, जिससे मूल्यवान विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है।

हिमाचल प्रदेश में घाटियां कम हैं तथा ऐसे-भाग वाले क्षेत्र अधिक है जहां खेती करना बहुत कठिन है। कुछ खाद्यान्न तिलहन और सब्जियां उगायी जाती हैं, लेकिन इतना कम कि वे केरल और उड़सा की तुलना में भी कहीं नहीं टिकतीं। संगठित उद्योगों के न रहने से यहाँ के लोगों और सरकार की आमदनी का मुख्य साधन कृषि और इससे संबंधित कार्य हैं अतः यह आवश्यक है कि ऐसी व्यापारिक फसलों का पता लगाया जाए जिनकी खेती लाभदायक हो। फसल ऐसी होनी चाहिए जो कम से कम कृषि योग्य भूमि में उगायी जा सके और लाभप्रद भी हो। प्रति इकाई भूमि से अधिकतम उपज मिले और लागत के साथ उसका अनुपात भी लाभदायक हो। इसलिए लम्बवत बढ़ने वाली फसल ज्यादा उपयुक्त होगी। इसके अलावा, यह भी ध्यान रखना होगा कि किसान के सीमित साधनों और घरेलू श्रम का पर्याप्त उपयोग हो।

कोई एक धंधा प्रमुख आमदनी का जरिया नहीं हो सकता। अर्थात् फार्म उद्योग के विभिन्न घटकों और कृषि तथा संबंधित आर्थिक कार्यों के बीच-बीच मे किये जाने योग्य पूरक कार्यों का पूरा-पूरा लाभ उठाना होगा। इस प्रकार वास्तविकता को देखते हुए पहाड़ी क्षेत्रों के विकास के लिए खुम्बियों की खेती पर अनुसंधान करना बहुत आवश्यक है।

नमी और तापमान को नियंत्रित करके खुम्बी को कहीं भी उगाया जा सकता है, लेकिन प्राकृतिक परिस्थितियों में इसे केवल समुद्र-स्तर से 5000 से 7500 फुट की ऊंचाई पर ही उगाया जा सकता है। कमरों के अन्दर 15° से 20° सेंटीग्रेड तापमान पर खुम्बियों को उगया जा सकता है। कम्पोस्ट, ट्रे, पम, जलांक (बीज) कीटनाशक दवाएं और घर जैसे प्रमुख साधनों की व्यवस्था करके इनकी खेती का धंधा शुरु किया जा सकता है। इसके अलावा, किसान इससे कितना लाभ प्राप्त कर सकेगा, वह उसके अनुभव और तकनीकी जानकारी पर निर्भर करता है। उत्पादन के हर स्तर पर सफाई, वातावरण की स्थितियों का उचित नियंत्रण, बीमारियों और कीटव्याधियों की रोकथाम के लिए किए गए उपाय, उपज को जल्दी बेच देने का प्रबन्ध, उत्पादन के लिए प्रयोग में लाए गए ढांचे आदि पर उपजायी गयी खुम्बियों की क्वालिटी और उनकी कीमत निर्भर करती है।

बाजार की सुविधा की दृष्टि से खुम्बी की खेती के लिए स्थान का चुनाव महत्वपूर्ण है। हिमाचल प्रदेश की सोलन पहाड़ियों पर तथा श्रीनगर, मंसूरी, ऊटी, दार्जिलिंग आदि के शीतोष्ण क्षेत्रों में लगभग प्राकृतिक परिस्थितियों में करीब नौ महीने तक शेडों में आगरिकस बिस्पेरस खुम्बी को उगाया जा सकता है। इसमें सर्दियों में तीन महीनों तक कमरे को गर्म रखना पड़ता है। लकड़ी के बुरादे से जलने वाले स्टोव से यह काम बहुत कम खर्च से किया जा सकता है। गर्मियों में कांच के रेशे से कमरे को तापरुद्ध करके खुम्बी की खेती की जा सकती है। इसे वातानुकूलित करने की आवश्यकता नहीं होती। अगारिकस बिस्पेरस की फसल 80-90 दिनों में तैयार हो जाती है और यदि अनुकूल परिस्थितियां जुटाई जा सकें तो साल भर में इसकी चार फसलें ली जा सकती हैं।

निर्यात प्रायोजना

अगारिकस बिस्पेरस के निर्यात की आर्थिक रूप से सक्षम प्रायोजना के लिए हर साल कम से कम 25 हजार किलो ताजी खुम्बी का उत्पादन होना आवश्यक है। इतनी उपज के लिए एक एकड़ का छठा भाग यानि 7260 वर्ग फुट भूमि की जरूरत है। इसमें से आधा भाग गेहूं का डंठल, गेहूं का बखार (भुसौरा), खाद, उर्वरक रखने और रास्ते बनाने के लिए छोड़ दिया जाता है। शेष आधा भाग आच्छादित रहता है जिसे वस्तुतः खुम्बी उगाने, जलांक लगाने और उपज को भंडारित करने के काम में लाया जाता है। एक ही आच्छादित जगह में कुल 25 हजार किलो खुम्बी का उत्पादन करना ठीक नहीं होगा क्योंकि इससे सामग्री के रख-रखाव में कठिनाई होगी तथा किसी तरह का संक्रमण होने पर पूरी फसल के नष्ट होने का डर होगा। आर्थिक रुप से सबसे उपयुक्त आच्छादित क्षेत्र 450 वर्ग फुट (30'×15') होगा। इसके एक तिहाई भाग (350 व० फुट) में खुम्बी उगानी चाहिए। इसका भरपूर आर्थिक उपयोग करने के लिए अनेक स्तरों में खुम्बी उगाना अच्छा रहेगा। 12 फुट ऊंचे कमरे में अगारिकस बिस्पेरस उगाने के लिए 5 स्तर बनाए जा सकते हैं। इस प्रकार 450 व० फु० अच्छादित क्षेत्र में ही 1500 वर्ग फुट (300'×5) में खुम्बी उगायी जा सकेगी। प्रतिवर्ष 25 हजार किलो० खुम्बी की उपज लेने के लिए ऐसे 5 कमरे बनवाने होंगे।

खेती, डिब्बाबंदी, भण्डारण, पैकिंग आदि की वैज्ञानिक विधि पर अनुसंधान करने की एक निश्चित योजना तैयार करनी चाहिए ताकि बड़ी संख्या में छोटे किसान इसे लाभदायक धंधे के रूप में अपना सकें। व्यावसायिक बैंकों के पहुंच जाने से अब इसकी खेती के लिए आवश्यक ऋण जुटाना आसान हो गया है। खुम्बी उत्पादकों को क्षेत्र के आधार पर आर्थिक सहायता देने का समाकलित कार्यक्रम तैयार किया जा सकता है। लेकिन इस प्रायोजना को साधनों, तकनीकी मार्गदर्शन तथा विपणन की सुलभता के साथ उपयुक्त ढंग से जोड़ा जा सकता है।

हमारे देश में खुम्बी की खेती अभी नयी है। इसलिए विशेषतः छोटे और सीमांत किसानों को खुम्बी की खेती की विस्तृत संभावनाओं और इससे प्राप्त होने वाली अधिक आमदनी के बारे में जानकारी देनी होगी। इन किसानों को खुम्बी की खेती शुरु करने के लिए प्रारम्भ में बहुत समझाना होगा। ★

विकास की विशेष योजनाओं का उल्लेख करना भी समीचीन होगा। इन योजनाओं के माध्यम से केन्द्रीय तथा राज्य सहायता बड़े परिणाम में उपलब्ध कराई जा रही है। इसका पूर्ण उपयोग भी सभी विभागों को करना है। अन्य विकास विभागों के ग्राम स्तरीय कार्यकर्ता किन विशिष्ट क्षेत्रों में कृषि उत्पादन के कार्य में सहायक सिद्ध हो सकते हैं इसका उल्लेख प्रत्येक विभाग के कर्मचारियों के लिए नीचे किया जा रहा है। स्पष्ट है कि यह सूची सम्पूर्ण नहीं है, केवल उदाहरण स्वरूप है।

1. **पंचायत सेवक**:—पंचायत सेवक अपने निर्धारित विभागीय कर्त्तव्यों के अतिरिक्त कृषि उत्पादन की दिशा में निम्नलिखित कार्य भी करेंगे :—
   (i) रबी, खरीफ तथा जायद अभियानों के लिए गांव सभा की बैठकों का आयोजन करना।
   (ii) उपलब्ध सिंचाई साधनों से अधिकतम क्षेत्र में सिंचाई का पानी पहुंचाने के लिए श्रमदान द्वारा गूल निर्माण का कार्यक्रम आयोजित करना।
   (iii) गाँवों के जविक कूड़े-करकट को सड़ा कर कम्पोस्ट बनाने हेतु स्थानों का आवण्टन कराना और उन पर निर्धारित दिर्देशों के अनुसार गड्ढे खुदवाना।
   (iv) गाँव सभा को फसल सुरक्षा के लिए आवश्यक साज सज्जा खरीदने को प्रेरित करना जिससे गाँव सभा उचित शुल्क लेकर किसानों की फसल की सुरक्षा कर सके।
   v) छोटे किसानों के उपयोग के लिए कृषि यंत्रों अथवा सामूहिक नलकूपों की व्यवस्था करने में गाँव सभा को प्रेरित करना।
   (vi) गांव में उपलब्ध खुले स्थानों पर वृक्षारोपण करवाना।
   (vii) दुग्ध उत्पादकों को प्राथमिक दुग्ध सहकारी समिति का सदस्य बनने के लिए प्रेरित करना।
2. **सहकारी पर्यवेक्षक** :—सहकारी पर्यवेक्षकों के कृषि उत्पादन कार्य के लिए निम्नलिखित कर्त्तव्य भी होंगे :—
   (i) रबी, खरीफ तथा जायद अभियानों के लिए बनाई गयी कृषि योजना के अन्तर्गत विभिन्न कृषि निवेशों की समय से पूर्व तथा यथेष्ठ मात्रा में आपूर्ति सुनिश्चित करना।
   (ii) रबी, खरीफ तथा जायद अभियानो से सम्बन्धित गाँव सभा की बैठकों में भाग लेना।
   (iii) क्षेत्रीय कृषि योजना के अनुरूप आवश्यकतानुसार ऋण की व्यवस्था करना।
   (iv) खाद्य, बीज तथा क्रय किए गए अन्न के भण्डारण की व्यवस्था करना।
   (v) दुग्ध उत्पादकों को प्रारम्भिक दुग्ध सहकारी समिति बनाने के लिए प्रेरित करना।
3. **पशुधन विभाग के स्टाकमैन** : कृषि उत्पादन के कार्य में निम्नलिखित उत्तरदायित्वों का निर्वहन करेंगे :—
   (i) हरे तथा पौष्टिक चारे की फसल उगाने का प्रसार तथा उसके लिए बीज की व्यवस्था करना।
   (ii) उत्तम तथा पौष्टिक चारे के संरक्षण के विषय में ग्राम वासियों का मार्गदर्शन करना।
4. **नलकूप चालक** : नलकूप चालक को भी कृषि उत्पादन हेतु निम्नलिखित कार्य करने चाहिए :—
   (i) नलकूप से अधिकतम सिंचाई हेतु गूल निर्माण कार्य में सहायता देना।
   (ii) सिंचाई के पानी के दुरुपयोग की रोकथाम के विषय में जानकारी देना।
   (iii) नलकूप के सीमावर्ती भूमि में धान आदि की सामुदायिक पौधशालाओं की स्थापित करना।
   (iv) नलकूप के बाहर की दीवारों पर फसलचक्र तथा सिंचाई के सन्तुलित उपयोग के बारे में प्रसार सामग्री का प्रदर्शन करना।
5. **दुग्ध पर्यवेक्षक** : दुग्ध पर्यवेक्षक को भी कृषि उत्पादन हेतु निम्नलिखित कार्य करना चाहिए।
   (i) चारे की फसल उगाने तथा उनके प्रसार का कार्य।
   (ii) उत्तम तथा पौष्टिक चारे तथा उसके बीज का संरक्षण।

5. इसी प्रकार यह आवश्यक है कि विकास विभागों के सभी जिला स्तरीय तथा विकास खण्ड स्तरीय अधिकारी भी अपने विभागीय कर्त्तव्यों के साथ-साथ अपने-अपने क्षेत्र में कृषि उत्पादन से सम्बन्धित कार्यक्रमों में अपना सक्रिय सहयोग देते रहें। वे जब भी अपने क्षेत्र में अपने विभागीय कार्यक्रमों का पर्यवेक्षण करते जाएं तो मुख्य-मुख्य कृषि उत्पादन कार्यों का भी पर्यवेक्षण करें और अपने सुझाव इस उद्देश्य से दें कि रबी, खरीफ तथा जायद अभियानों के लिए बनाई गई योजना किस प्रकार अधिक प्रभावी तथा फलदायक हो सकती है। इस प्रकार से कृषि उत्पादन कार्य से सम्बद्ध रहने से वह इस गुरुतर कार्य में सहयोग देंगे ही, इस प्रणाली से उन्हें अपने विभागीय कार्य में अधिक सफलता मिलेगी।

6. मुझे विश्वास है कि यदि ग्राम सेवक सूक्ष्म नियोजना प्रणली द्वारा पहले से ग्राम सभा के प्रत्येक फसल की उत्पादन योजना बनाकर इसमें अपने अन्य ग्राम स्तरीय साथियों का उपरोक्त दिशा में सहयोग प्राप्त करेंगे तो कृषि उत्पादन की दिशा में इस प्रदेश में निश्चय नये कीर्तिमान स्थापित किए जा सकेंगे। अतएव अनुरोध है कि आप अपने मण्डल व जिले में ग्राम स्तर पर विकास विभाग के इन विभिन्न कर्मचारियों को भली-भांति गुम्फित कर कृषि कार्यक्रमों का समयबद्ध तरीके से कार्यान्वयन करा कर अभीष्ट लक्ष्य प्राप्त करने में अग्रसर होंगे। ★

त्रिभुवन प्रसाद
आयुक्त एवं सचिव
कृषि उत्पादन एवं ग्राम विकास
उत्तर प्रदेश शासन
सचिवालय लखनऊ

रूपक

बैल के पाँव तले

पात्र :—

1. **दीनदयाल** : गांव का साहूकार।
2. **कृष्ण** : दीनदयाल का इकलौता बेटा शहर से वकालत की पढ़ाई पूरी करके आया है।
3. **भीखू** : एक गरीब किसान दीनदयाल का कर्जदार।
4. **किशनी** : भीखू की जवान बेटी दसवीं, तक पढ़ी है।

(भीखू किसान की झोपड़ी का बाहरी दृश्य। छप्पर के नीचे एक घड़ा, चूल्हा और कुछ बर्तन रखें हैं। सामने ही एक चारपाई खड़ी की हुई है। झोंपड़ी के एक ओर बैल बंधे होने का आभास होता है। शाम का समय है भीखू किसान मैली सी धोती बांधे, शरीर पर एक खद्दर का कुर्ता डाले, पाँव में टूटी सी जूती पहने प्रवेश करता है। वह काफी थका हारा प्रतीत होता है। चुप-चाप आकर चारपाई बिछाता है और अपने हाथों पर माथा रखकर बैठ जाता है। फिर जेब से बीड़ी निकाल कर सुलगाता है। तभी उसे खांसी उठती है। खाँसने की आवाज सुनकर किशनी अन्दर से आती है।)

किशनी : अरे बापू। तुम कब आए ? मुझे तो तुम्हारे आने का पता ही नहीं चला।

भीखू : लाश की भी कोई आवाज होती है बेटा जो तुझे मेरे आने का पता चलता।

किशनी : छी···छी···कैसी छोटे दिल की बातें करते हो बापू। भला यह तो सोचो अगर तुम ही ऐसी बात करोगे तो मेरा क्या होगा ?

भीखू : क्या होगा बेटी ? वही होगा जो तेरे भाग्य में है। भगवान ने न जाने क्या सोच रखा है ? लगता है इस बार भी सूखा ही पड़ेगा। सोचता था कि इस साल बारिश होगी तो खेतों में अच्छी फसल हो जायेगी। सेठ का कर्जा भी उतार दूंगा। और तेरे हाथ भी पीले कर दूंगा। पर लगता है कन्या दान का पुण्य मेरी किस्मत में नहीं है।

किशनी : ओ हो तुमसे कितनी बार कहा है बापू कि मेरी चिन्ता मत किया करो। हां उस सेठ का कर्जा किसी तरह उतर जाये तो ठीक है। आते जाते मेरी तरफ ऐसे घूरता है जैसे खा जायेगा। बेशर्म कहीं का। उसकी अपनी बेटी होती तो पता चलता।

भीखू : तू ठीक कहती है बेटी। पर गरीब की कौन सुनता है। कई बार मुझे भी इसी तरह की बात कह चुका है। यह तो शुक्र है कि उसके घर में एक देवता स्वरूप बेटा है नहीं तो जाने वह पापी क्या कर गुजरता।

किशनी : सच बापू उनका नाम तो कृष्ण है ही पर है भी कृष्ण की तरह। पिछले साल उन्होंने ही गुण्डों से बचाया था। अगर वे वक्त पर नहीं पहुंचते तो आज तुम्हारी बेटी इस दुनियां में नहीं होती।

भीखू : (किशनी के सर पर हाथ फेरते हुए) पगली कहीं की। अरी कृष्ण भगवान् तो हर युग में रहते हैं। हर जगह कोई न कोई द्रोपदी होती है और हर बार वे किसी न किसी तरह उसकी लाज बचाते है, जा तू एक लोटा पानी ले आ मेरे लिए।

किशनी : अभी लाई बापू।

(किशनी पानी का लोटा भर कर भीखू को देती है। भीखू अपना मुंह धोकर चारपाई पर लेट जाता है। अंधेरा होने लगता है। किशनी लालटेन जलाती है।)

भीखू : रहने दे बेटी। लालटेन मत जला। अब तो मुझे अंधेरा ही अच्छा लगता है।

किशनी : नहीं बापू। रोशनी रहने दो। कहते हैं अंधेरा हो तो लक्ष्मी घर में नहीं ठहरती।

भीखू : (फीकी मुस्कान के साथ) अरी लक्ष्मी होगी तो ठहरेगी ना। जब कुछ है ही नहीं तो क्या अंधेरा और क्या उजाला।

(भीखू फिर उठकर बीड़ी जलाता है। किशनी थाली में खाना डालती है। भीखू को फिर से खांसी उठती हैं।)

किशनी : तुमसे कितनी बार कहा हैं कि बापू बीड़ी मत पीया करो। पर तुम हो कि हर समय अपना कलेजा फूंकते रहते हो। मेरी तो कभी सुनते ही नहीं।

भीखू : अरी कलेजा है कहां मेरे पास। अगर होता तो तेरी मां को चार आने की दवाई के लिए मरता न देख सकता। उसी के साथ भगवान् के घर चला गया होता।

कहानी

गांव और गाय ★ बटुकेश्वर दत्त सिंह

"भैया, जौने दुआरे पांच-पांच लागन पशु दूध देंय, वहि घर दुधगड़वा की दुधहंडी मां दूध न पाके भला वहौ कउनेव गिरस्त क्यार घर आय ? गौपालक किसनदास की बूढ़ी मां ने अपने परिवार की सारी समस्याओं का जैसे मूल कारण ही कह सुनाया। मैं पिछली बसंतपंचमी के अवकाश में घर जाते जब पड़ोसी गांव यादवपुरा से होकर निकला तो वहां के महतो-किसनदास ने मुझे अपने द्वार पर बैठा लिया था। गांव-घर के हाल-चाल पूछने की सामान्य औपचारिकता के उपरान्त किसनदास ने अपने लड़के से चाय बनवाकर लाने को कहा और उसके जाने के बाद मुझसे बोले—"देखा आपने आजकल इन लड़कों को, गांव में रहते हुए भी बेलबाटम पहने दिन-भर बस इधर-उधर कूल्हे मटकाते फिरते हैं। किसान के घर जन्म लेकर स्कूल से छुट्टी के दिन भी यह नहीं होता कि एक बोझ बरसीम ही खेत से काट कर ले आवें।

"यह आप का बड़ा लड़का है न यादव जी। किस कक्षा में पड़ता है ?" मैंने बात आगे बढ़ाई। किसनदास और अधिक गम्भीर होते हुए बोले—यहीं अपने बख्शी-का-तालाब कालेज में पिछले चार सालों से दसवीं में पढ़ रहे हैं। पहली बार तो यह कहकर बोर्ड की परीक्षा में सम्मिलित नहीं हुए कि कालेज में हड़ताल होती रहने के कारण पढ़ाई ठीक से न हो सकी अतः डिवीजन बिगड़ जाएगा' परन्तु अगली बार से परीक्षा देकर भी पास नहीं होते। जमाने को ही न जाने क्या होता जा रहा है, भाई साहब। वर्ना मैंने भी वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल तक पढ़ाई की थी। घर से ढाई कोस दूर इटौंजा पैदल पढ़ने जाता था और रात्रि कक्षाओं के समय तो यह दूरी दिन में चार बार नापनी पड़ती थी। बेझर की बासी रोटी खाकर भी मैंने सातवें की यू० पी० बोर्ड की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की थी। एक यह मेरे सुपुत्र हैं जो चार कि० मी० दूर कालेज तक मोटर साइकिल पर चढ़कर पढ़ने जाते हैं और अठारह साल के हो जाने पर अभी मात्र चौथी बार हाई स्कूल की परीक्षा में सम्मिलित होने की तैयारी कर रहे हैं।

अब तक किसनदास की बूढ़ी मां हमारे पास आकर पुआल के बने एक मोढ़े को खिसकाकर बैठ चुकी थी। वह बातों का सिलसिला अपनी ओर लेकर बोली "बेटा, इस किसन से पूछो सबेरे-सबेरे जब यह स्कूल जाने की जल्दी में रहता था तो अलाव पर गरम-गरम सिकी बेझर की बासी रोटी पर लप भर मक्खन चुपड़ कर इसे खाने को देती थी। बेसन की मोटी रोटियां कटोर भर दही में मीसकर इसे खिलाती थी। घर में दूध-घी की कमी न थी। मैं स्वयं अपने हाथों से सभी पशुओं की व्यवस्था करती थी। उनका चारा-पानी, दूध निकालना और चार घड़ी रात रहे ही उठकर मटका भर दही मथकर मक्खन निकालना होता था। आजकल की बहू-बेटियों की तरह खाली साज शृंगार में नहीं खोई रहती थी। मेहनत करतीं थी तभी गायों का दूध देखने को मिलता था। घर वालों को छक कर दूध-घी खिलातीं और खाती भी थीं। हमारे घर दूध-दही बिकता न था। आवश्यकता से अधिक होने पर घी अवश्य बेच लेते थे। मट्ठा तो मैं बिना नागा पड़ोसियों के घर दे आती थी। तभी सारा गांव हमारे इस महतो घराने का आज तक यशगान करता है। आज इस घर के बच्चे वनस्पती घी के बने पराठे और चाय पीकर पढ़ने जाते हैं। कहां से आये उनमें बुद्धि और शक्ति।

बूढ़ी मां के पास अभी सम्भवतः बहुत कहने को शेष था, परन्तु तब तक चाय की केटली हमारे बीच रख दी गई, जिसे देखकर उसने अपना माथा दोनों हाथों से दाबा और चुप हो गई। हम आनन्द से चाय की चुस्कियां ले रहे थे। बातों-बातों में किसनदास ने बताया—उसके घर अब भी तीन हरियाना गायें और दो मुर्रा भैंस दूध दे रही हैं परन्तु सारा दूध उसे बेचना होता है। पिछले वर्षों में उसे अपने बड़े लड़के और दो लड़कियों के विवाह करने पड़े। बिरादरी वाले नहीं माने, करता क्या। बड़प्पन के दिखावे में उसने विवाहों में अपनी हैसियत से बाहर खर्च कर डाला। जिसके कारण सहकारी समिति से दुधारु पशुओं को क्रय करने के नाम से लिए गए ऋण के रुपयों में से अधिकांश अनुत्पादक कामों में खर्च हो गए। अब समिति का ऋण चुकाने के लिए घर की गायों का सारा दूध को-आपरेटिव मिल्क यूनियन लखनऊ को बेच देता है। भैंस के दूध में पानी मिलाकर उसे गाय का दूध कहकर बेचता है। उसने उन्नत नस्ल की गायें खरीदने के लिए ही तो समिति से ऋण लिया था। किसी तरह उसे अपने घर की इज्जत ढकी-मुंदी निभानी है। उसके अपने बच्चे हाथों में खाली गिलास लिए दूध निकालने के लिए प्रयोग की जाने वाली बाल्टी की ओर ललचाई निगाहों से देखते रह जाते हैं और वह सारा दूध मिल्क यूनियन वालों को नाप देता है। कभी-कभी तो चाय के लिए भी दूध नहीं बचता।

मैं बहुत कुछ कहना चाह कर भी चुप था परन्तु मस्तिष्क में ये प्रश्न बार-बार उठ रहे थे तो क्यों दोष देते हो यादव जी अपने बेटे को ? पन्द्रह वर्षों की अल्प आयु में ही शादी रचाके बहू घर में बैठा ली, खाने में दूध-दही के भरे कटोरों के स्थान पर चाय के प्याले पकड़ा दिए; घी-मक्खन की बात ही नहीं

उठती। जब घर में दूध गड़वा में दूध-हंडी ही नहीं चढ़ती। अलबता गांव में दो मंजिला आलीशान मकान बनवा लिया है; पहनने के लिए बेटे, बेटियां और बहुएं सुपर फाइन से कम में अपनी इन्सल्ट मानती हैं। स्त्रियों के तन पर स्वर्णभूषणों की कमी नहीं; बेटे को ससुराल वालों ने विवाह में मोटर साइकिल खरीद दी है।

काफी समय तक किसनदास से उसके घर-परिवार की बातें सुनता रहा। इस बीच पड़ोस के अन्य बहुत से लोग भी एकत्र हो गए, तो हमारी बातों का रुख सामूहिक चर्चा में बदल गया। गोपालकों में से अधिकांश की एक जैसी समस्याएं हैं। गांवों के चरागाह बढ़ती हुई आबादी को पेट भरने के लिए जोत कर खेतों में बदल गए। अतः धरम-करम निभाने के लिए ही गायें पाल रक्खी हैं। देशी गायें खूटें से बांधकर कितनी ही खिलाई जायें किलो-दो किलो से अधिक दूध नहीं देती। किसनदास जैसे तथा-कथित पैसे वालों के पास ही कुछ हरियाणा और साहीवाल नस्ल की गायें हैं।

"दरवाजे पर एक पूंछ गाय की भी न हुई तो रसोई से गौमाता के नाम पर निकाली जाने वाली आटे की लोई किसे खिलायेंगे?" यह बात गांव के पुराने नम्बरदार ठाकुर ने कही। लोगों ने बताया-ठाकुर साहब दिन में एक बार धान का सूखा पुआल अपनी गौ माता के आगे डाल देते हैं, जिसे वह खाये न खाये उसके अपने करम। कोई हरा-चारा, खली-दाना आदि कभी देने की बात सोची भी नहीं। ठाकुर साहब हमारे बीच से ऊबकर उठते हुए मुझे यह भी बता गए कि गांव के हरिजनों ने मुर्दा पशु उठाने बन्द कर दिए हैं, इसलिए यह अच्छा ही हुआ उनके खूंटों पर से सारी गायें एक-एक करके इस निर्णय के पहले ही स्वर्ग सिधार गई, नहीं तो दफनाने की भी समस्या सामने आती।

इस व्यंग्य पर पास बैठे हुए कुछ प्रगतिशील विचारों के युवक कहने लगे—जिस गौमाता का दूध पीकर हम बढ़ते हैं, यदि उसकी मृत्यु हो जाने पर हमें स्वयं उठाकर दफनाना पड़ा इससे हमारी प्रतिष्ठा घटेगी नहीं वरन् गोसेवा के प्रति निष्ठा ही प्रकट होगी। जिन्दा रहते हुए गोवंश हम भारतीय किसानों की अनेक प्रकार से सेवा करता है, उसकी मृत्यु-परान्त विसर्जन में क्या हम इतना भी नहीं कर सकेंगे।

ग्राम्य विकास कार्यक्रमों की अनेक बातों के मध्य जब मैंने ग्रामवासियों को साहीवाल और हरियाणा गायों की विदेशी फ्रिजियन अथवा जरसी साड़ों से उत्पन्न संकर गायों को पालने की सलाह दी तो किसनदास का बेटा मुझसे सहमति प्रकट करता हुआ बोला—अंकल जी, हम अपने कालेज स्टूडेंटस के साथ स्टडी-टूर के सिलसिले में लखनऊ के मिलिट्री डेयरी फार्म तथा प्रदेश सरकार के चकगंजरिया स्थित पशु प्रक्षेत्र पर गए थे। वहां हमने ऐसी गायें देखी हैं जो 35-40 किलो तक प्रतिदिन दूध देने वाली हैं।

हां बेटा हमारे देश के योजनाकार इन्हीं फ्रिजियन या जरसी नश्ल के साड़ों से अपने यहां की गांयों द्वारा श्वेतक्रांति हम ग्रामवासियों तक ला रहे हैं।

अपने बेटे की बात मेरे द्वारा पुष्टि किए जाने पर किसनदास ने शंका प्रकट की—30-40 किलो प्रतिदिन दूध देने वाली गायों को हम गांव वाले कहां से पाल पायेंगे? इन्हें बोरों दाना भी तो खाने को देना होगा।

कहीं बिना पूंजी लगाए भी लाभ की आशा की जाती है। कोई गाय यदि 30 किलो प्रतिदिन दूध देकर बीस किलो दाना खा जाए तब भी 30 किलो दूध का सामान्य भाव पर 60 रु० दाम हुआ जब कि 20 किलो दाना अधिक से अधिक 30 रुपयों का मिलेगा। यदि 10 रुपये प्रतिदिन अन्य चारे और रख-रखाव पर जोड़ ले तो भी 24 घंटों में ही 40 रुपयों की लगाई गई पूंजी ड्योढ़ी हो जाती है। है ऐसा कोई दूसरा व्यवसाय?

—अंकल जी ऐसी ही गायें पालने के लिए पिताजी से कई बार कह चुका हूं। इन्हें मुझ पर विश्वास ही नहीं होता। ऐसी दो गायें यदि मुझे मिल जायें तो मैं उनकी सारी व्यवस्थाएं स्वयं करके इन्हें दिखा दूं कि श्वेतक्रांति कैसे आएगी।

—राजकीय डेयरी फार्मों से शाहीवाल और फ्रिजियन की संकर बछिया पशु पालकों को उपलब्ध हो जाती हैं, परन्तु दूर जाने की क्या आवश्यकता। हम सभी गोपालकों को चाहिए कि अपने विकास क्षेत्र में स्थित पशु-चिकित्सालयों में जाकर अपनी देसी गायों को भी इन साड़ों के बीज से कृत्रिम गर्भाधान द्वारा गर्भित करालें, तो पैदा होने वाली बछिया अपनी मां से बहुत अधिक दूध देने वाली बन जाती हैं। गोपालन संबंधी अन्य अनेक जानकारियां भी आपको वहां से मिलेंगी।

उस समय मैंने देखा और सुना—लोग आपस में बातें कर रहे थे—"हम गांव वालों की उन्नति के लिए अनेक योजनाएं हैं, हम उनकी जानकारी करके क्यों न आगे बढ़ें? कोई कब तक हमें अंगुली पकड़कर चलना सिखाएगा?"

—प्रसार प्रशिक्षण अधिकारी
प्रसार प्रशिक्षण केन्द्र,
बख्शी-का-तालाब,
लखनऊ-226202 (उ० प्र०)

आ गया है हमारा जमाना

★ विद्या 'रश्मि'

फिर नशेमन जलवे सजाए
बाद मुद्दत के हम मुस्कराए
आ गए फिर दरख्तों के पत्ते
वक्त ने फिर कबूतर उड़ाए
वो किनारे जो सूखे पड़े थे
जल के सागर वहीं खोज पाए
उड़ रही है हवाओं में खुशबू
हर कदम पे हैं जन्नत के साए
धूप जलती हुई बुझ गई है।
चांदनी में स्वयंबर रचाएं
अब अंधेरा शब का कहां है
रोशनी में शिकारा बहाए
आ गया है हमारा जमाना
कोई नज़रें न हमसे मिलाए
'रश्मि' तसउवर में बैठा बैठा कोई
जिन्दगी की गज़ल गुनगुनाए

सिमेंट का विकल्प ★ सुरेन्द्र अनुरागी

हम गांवों में ग्राम्य टेक्नालोजी के द्वारा अनेक कार्य कर सकते हैं जिनमें चूने का भटट्ा, सीमेन्ट और धानी तेल शोधन आदि है। इसमें सीमेन्ट प्रमुख है जिसकी कमी बहुत खलती है। क्यों न हम इसका उद्योग लगाएं और उत्पादन बढ़ाएं।

आज भी भारत में सीमेन्ट की कमी दिखाई देती है जिसके एक कटट् की दर बीस रुपये है परन्तु कमी के कारण यह आसानी से उपलब्ध नही होता और इस की दर निश्चित दर से सदा अधिक रहती है। प्रायः इसका उपयोग शहर में अधिक होता है। गांवों में तो लोगों को इसके दर्शन तक नही होते। वह अपने मकान मिट्टी और चूने से बनाकर गुजारा करते हैं। नई टेक्नालोजी के अनुसार पोजलाना सुर्खी को सीमेन्ट की संज्ञा दी गई है। वैज्ञानिकों का कहना है कि यदि पोजलाना सुर्खी को सीमेन्ट में मिला दिया जाए तो वह सीमेन्ट को और अधिक मजबूत बना देती है। इस सुर्खी का हमारे वैज्ञानिकों ने बांध बनाने में उपयोग किया है। हमें मिट्टी के लिए कहीं भागने दौड़ने की आवश्यकता नहीं। यह हमारे गांवों में काफी है। केवल प्रयत्न इतना करना पड़ेगा कि कौन सी मिट्टी पोजलाना सुर्खी के लिए ठीक होगी। उसे भी हम वैज्ञानिकों की सहायता से खोज सकते हैं।

वैज्ञानिकों का कहना है कि यदि चिकनी मिट्टी और सिल्ट वाली मिट्टी को बराबर के अनुपात में मिलकर ईटों की तरह भटटे में पकाया जाए और सीमेन्ट की तरह बारीक पीस लिया जाए तो वह सीमेन्ट की तरह ही काम करती है। इसे उन्होने पोजलाना सुर्खी का नाम दिया है। इसका रंग भी सीमेन्ट की तरह काला ही होता है। यह सुर्खी एक और पांच के अनुपात में मिलाई जाती है। (एक हिस्सा सुर्खी और पांच हिस्से सीमेन्ट)

पोजलाना सुर्खी को तैयार करने के लिए केवल दो चीजों की आवश्यकता होती है। पकाने के लिए भट्टा और पीसने के लिए चक्की। इन दोनों वस्तुओं का प्रबन्ध टेक्नालोजी ग्रामीकरण परिषद् के राजस्थान ग्रामीण अनुसंधान केन्द्र ने कर लिया है। अब इन संयत्रों को गांवों में ले जा कर लगाया जा सकता है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि इस उद्योग में दो से पांच टन तक प्रतिदिन पोजलाना सुर्खी तैयार की जा सकती है। इस संयन्त्र की लागत लगभग 80 हजार रुपये आंकी गई है परन्तु यह उसके आकार पर निर्भर करता है कि वह कितना बड़ा चाहिए। इसको एक बार चलाने में लगभग बीस मजदूरों की आवश्यकता पड़ती है। यदि इसे फैक्ट्रीयों की तरह दिन-रात चलाया जाए तो इससे काफी हद तक बेकारी समाप्त हो सकती है। मजदूरों को रोजगार मिल सकता है। संयत्र से कम से कम प्रति दिन 150 रु० लाभ होने की संभावना है। यह मिट्टी सीमेन्ट की अपेक्षा बहुत सस्ती होती है। इसका मूल्य बड़ी मुशकिल से चार या पांच रुपये प्रति कटटे का आता है। जबकि सीमेन्ट का कट्टा बीस रुपये और इससे अधिक भी पहुंच जाता है।

पोजलाना और सीमेन्ट में अन्तर खोजना बड़ा कठिन है क्योंकि पोजलाना का रूप-रंग बिल्कुल सीमेन्ट जैसा ही होता है। साधारण व्यक्ति इसकी पहचान नही कर सकता।

यदि वास्तविक रूप से देखा जाए तो यह ग्रामोद्योग में नया चरण है जिसकी आवश्यकताओं की पूर्ति गांव में ही उपलब्ध है। यदि इस उद्योग का प्रचार और प्रसार सरकार ऋण देकर करे तो सीमेन्ट उद्योग में कायाकल्प हो सकती है। गांव के किसान और मजदूर जो फसलों के बीच में कुछ महीने बेकार रहते हैं, मजदूरी करके लाभ उठा सकते हैं। इस उद्योग से गांवों में बेकारी तो समाप्त होगी ही, साथ ही गांव अधिक प्रगतिशील बनेंगे। बापू का सपना साकार होगा। आए दिन सीमेन्ट की कमी भी दूर हो जाएगी। यदि इसका उत्पादन अधिक हुआ तो इसे विदेशों में भेजकर विदेशी मुद्रा भी कमायी जा सकती है। विश्व में अनेक ऐसे छोटे-छोटे देश हैं जहां मकान, फैक्ट्री और बांध के लिए सीमेन्ट की आवश्यकता होती है और वह उसे विदेशों से आयात करते हैं। भारत आगे चलकर सीमेन्ट का भी निर्यात कर सकेगा जिससे भारत के उद्योग को बल मिलेगा और भारत के गांवों का भविष्य उज्ज्वल होगा।

सुरेन्द्र अनुरागी
अर्थ एवं अंक निदेशालय
कमरा न. 546
कृषि भवन
नई दिल्ली

साहित्य समीक्षा

हमारी बोध कथाएं : सम्पादक यशपाल, जैन प्रकाशक : सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली, पृष्ट संख्या—41, मूल्य 2.00 रु० ।

प्रत्येक युग के साहित्य में ऐसी अनेकों प्रेरक कथाएं मिलेंगी जिन्होंने मनुष्य का चरित्र निर्माण करने में महत्वपूर्ण भूमिका अभिनीत की हैं। इस धरती पर कोई भी मनुष्य ऐसा नहीं है जिसमें सद्‌गुणों के अंकुर व्याप्त न हों, यदि उन्हें अनुकूल पर्यावरण और प्रेरणा मिले तो वे अंकुर विशाल वृक्ष में अंकुरित होकर अपने स्नेहिता स्पर्श से शीतल छाया का आभास दे सकते हैं और अपने सत्संग रूपी फलों से आत्मिक क्षुधा निवारण में भी सहायक हो सकते हैं।

कुछ ऐसा ही अहसास हुआ 'हमारी बोध कथाएं' की अति प्रेरणात्मक कथाएं पढ़ कर। आज के इस भौतिक युग में जीवन का ढर्रा ही कुछ ऐसा है कि मनुष्य स्वार्थी, अहं से परिपूर्ण और क्रोध की भावनाओं से आक्रांत है और इनके अतिरेक में वह पूज्यों और मनीषियों को भी अश्रद्धा से देखता है इन कथाओं को पढ़कर मन कुछ पल के लिए सोचने के लिए मजबूर हो जाता है और उसे महसूस होता है कि वह त्रुटि तो मुझमें भी है और इसका निवारण होना ही चाहिए। 'प्रेम की महिमा' शीर्षक कथा की यह पक्तियां मन में गूँज कर घृणित पात्र से भी प्रेम करने की प्रेरणा दे रही हैं। ऐसा कोई भी लकड़ी का तख्ता न होगा—चाहे वह कितना भी सड़ा गला क्यों न हो, जिसमें एक कुशल मिस्त्री कुछ रेशे ठीक अवस्था में न देख सकें, वृक्षों की कठोर गांठे मूर्ति बनाने वाले कलाकार के बड़े काम आती हैं। इसी तरह आगे बढ़ने के लिए जो साधनों के अभाव की दुहाई देते हैं उनको बोध कराने के लिए 'अमृतत्व की किरण' आलोक लुटा कर यही बोध कराती हैं कि 'सूर्य तक पहुंचने के लिए प्रकाश की एक ही किरण बहुत है, वह किरण किसी को पहुंचानी भी नहीं है। वह तो, हर एक के पास मौजूद है। बाधाओं से घबराने की भी आवश्यता नहीं है यह प्रेरणा भी यही कथाएं दे रही हैं......दो काली अंधेरी रातों के बीच में एक सुनहरा दिन छिपा रहता। और अहं तो हर रास्ते का सबसे बड़ा रोड़ा है ...... सत्य को पाना है तो स्वयं को छोड़ दो।

इस प्रकार इन कथाओं को जीवन में उतार कर आगे बढ़ें तो कौन सी ऐसी मंजिल होगी जो पहुंच से बाहर हों।

यह बोध कथाएं युगीन प्रभाव लेकर उपस्थित हुई हैं। हर युग और हर वर्ग के लिए इनकी उपयोगिता है यह तो जीवन के शाश्वत् सत्य हैं जिन्हें कभी भी नकारा नहीं जा सकता। भाषा भी बालक से लेकर सुविज्ञ पाठक सभी के लिए बोधगम्य है। कहीं-कहीं मुद्रण की कुछ त्रुटियां खटकती हैं लेकिन इसे पाकर पाठकों को सुखद अनुभूति होगी और वे प्रेरणा ग्रहण करेंगे। इसे पढ़कर ऐसा लगा कि वास्तव में बाह्याकार से हमें किसी की प्रभविष्णुता नहीं आंक सकते।

श्री मती सत्या शर्मा
एफ-6, जवाहर पार्क
(वैस्ट) लक्ष्मी नगर,
दिल्ली-110051

सिकन्दर (नाटक) लेखक : श्री सुदर्शन, प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ संख्या 129, मूल्य 10.00 रु० ।

आज तक हिन्दी के पाठकों ने हिन्दी के यशस्वी लेखक श्री सुदर्शन की कहानियां पढ़कर वास्तविक सुदर्शन को पहचाना और सराहा है। मगर प्रस्तुत नाटक सिकन्दर को जब पढ़ना शुरू करेंगे तो समाप्त होते तक नहीं छोड़ेंगे क्योंकि सम्पूर्ण नाटक रोचक और प्रेरक बन पड़ा है। जिन पाठकों को नाटक का स्वाद घिये की सब्जी की तरह अटपटा लगता है उनके लिए यह नाटक स्वादिष्ट और चटपटी चटनी से भी अधिक मनोरंजक लगेगा इस नाटक में लेखक ने विश्व विजेता सिकन्दर के दम्भी, महत्वाकांक्षी, विश्व विजेता और यूनानी वीरता के प्रतीक आदि का बहुत ही सुन्दर ढंग से चित्रण किया है। पुरु के चरित्र के माध्यम से लेखक ने देशभक्ति, रणनीति, स्वाभिमान और अपने देश पर मिटने वाली अमिट भावनाओं का सफलता से निर्वाह किया है। सिकन्दर द्वारा बोले गये यह वाक्य जो आदमी कामयाब होना चाहें उसमें अपना दिल और इरादा छिपाने की ताकत होनी चाहिए। हर वक्त और हर जगह सच बोलने वाले आदमी की मरने के बाद पूजा हो सकती है मगर वह अपनी जिन्दगी में हमेशा नाकामयाब रहता है (पृष्ठ संख्या 61) हिन्दी साहित्य का एक शिला लेख बन जाएगा।

नाटक की भाषा उर्दू मिश्रित है अर्थात् आम बोलचाल की भाषा है। इससे नाटक क्लिष्ट हिन्दी का शिकार होने से बच गया है। 'सिकन्दर' नाटक होते हुए भी एक रोचक उपन्यास का आनन्द देता है। समकालीन घटनाओं का चित्रण हू-बहू तत्कालीन ढंग से करना लेखक की पैनी और दूरदर्शी दृष्टि का परिचायक है।

एक बात जो नाटक में बहुत खलने वाली है वह है इसका मूल्य (दस रुपये) यह अनिवार्य से अधिक है जिससे कि पुस्तक को आम पाठकों तक पहुंचने में समय लगेगा। अगर नाटक और लेखक के मन्तव्य को जन-जन तक पहुंचाना है तो इसको सस्ते दामों

में प्रकाशित करना चाहिए जिससे आम पाठक भी इसे खरीद कर पढ़ सकें। दूसरे नाटक में उर्दू शब्द की भरमार है जिससे नाटक को हिन्दी का कहने में हिचक होती है। इन थोड़ी सी खामियों के बावजूद इस नाटक का प्रकाशित होना एक सफल प्रयास कहा जाएगा।

—चन्द्रमोहन बुद्धिराजा (बुद्धिराज)
ई-15 कृष्ण नगर,
दिल्ली 110051

राजनीतिक चिंतन का इतिहास : लेखक जीवन मेहता, प्रकाशक साहित्य भवन, आगरा (उ० प्र०) पृष्ठ संख्या : 526, मूल्य : 2 रु०।

विश्व की सभी प्रकार की राजनीतिक व्यवस्थाएं किसी न किसी विचारधारा व उद्देश्यों पर आधारित होती हैं। राजनीतिक विचारधाराओं का अध्ययन उस समय तक सही रूप में संभव नहीं हो सकता जब तक कि विभिन्न दार्शनिकों व राजनीतिक विचारकों का गहन अध्ययन न किया जाए। प्रस्तुत पुस्तक विभिन्न विचारकों के विचारों का गहन विश्लेषण करने के उद्देश्य से लिखी गई है।

आलोच्य पुस्तक सोफिस्ट चिंतकों के विश्लेषण से प्रारम्भ होती है। पुस्तक के प्रारंभिक 18 अध्याय मूलतः प्लेटो व अरस्तु जैसे महान् दार्शनिकों के अध्ययन से संबंधित हैं। प्लेटो का शिक्षा सिद्धान्त, साम्यवाद का सिद्धान्त, आदर्श राज्य आदि, काफी चर्चा के विषय रहे हैं। लेखक प्लेटो के आदर्श राज्य को काल्पनिक मानते हुए भी उसे वर्तमान जीवन को प्रभावित करने के लिए उपयोगी मानता था। लेखक आलोचकों के इस मत से भी सहमत नहीं है कि प्लेटो मूलत : सोफिस्टवादी विचारक है। अरस्तु से संबंधित अध्यायों में उसके जिन प्रमुख सिद्धान्त का विश्लेषण किया गया है वे हैं : न्याय एवं शिक्षा का सिद्धान्त, संपत्ति व परिवार संबंधी विचार, आदर्श राज्य, दास-प्रथा का सिद्धान्त, क्रांति संबंधी सिद्धान्त, नागरिकता व कानून संबंधी विचार, संविधान आदि। प्लेटो व अरस्तु का तुलनात्मक अध्ययन पुस्तक की विशेषता है।

इसके पश्चात्, पुस्तक मध्य युगीन विचारको व इसाई धर्म के विचारकों का विश्लेषण है जो उस समय फैले पोप व चर्च के भ्रष्टाचार व धर्म विरोधी गतिविधियों पर प्रकाश डालते हुए उसकी राजनीतिक महत्वकांक्षा व प्रभाव शीलता पर प्रभाव डालता है।

पुस्तक के अंतिम आधे भाग में आधुनिक विचारकों को सम्मिलित किया गया है। इनमें मैकियावली, जीन बोदां, ह्यूगो ग्रोशियास, टॉमस हाब्स, जॉनलाक, जीन जैक्स, रूसो, डेविड ह्यूम, एडमन्ड बर्क, जेरेमी बेन्थम, जान स्टुअर्ट, जार्ज बिल्हैल्म, फ्रेड्रिक हीगल, टामस हिल ग्रीन, व कार्ल मार्क्स सम्मिलित हैं। आधुनिक राजनीतिक चिंतन के विकास में इन सभी विचारकों का काफी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। पूंजीवाद सोफिस्टवाद से लेकर समाजवाद व कम्युनिज्म तक की सभी विचार धाराएं इनमें स्पष्ट रूप से उभर-कर सामने आती हैं। कार्ल मार्क्स के विचारों का विश्लेषण करते हुए लेखक ने उसके वैज्ञानिक समाजवाद, द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद, इतिहास की आर्थिक व्याख्या, वर्ग संघर्ष का सिद्धान्त, अतिरेक मूल्य का सिद्धान्त, राज्य सिद्धान्त व क्रांति सिद्धान्त का विस्तार से विश्लेषण किया है। मार्क्सवाद पर संशोधन वादियों के आक्रमण की विवेचना करते हुए लेखक का यह मत सही है कि संशोधनवादियों के आक्रमण मार्क्सवाद की बुनियादी मान्यताओं पर प्रहार करते हैं और इसलिए उन्हें मार्क्सवादियों द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया है।

कुल मिलाकर यह एक स्वागत योग्य प्रकाशन है। पुस्तक का प्रकाशन संतोषप्रद है। मुख्य पृष्ठ आकर्षक है। पुस्तक का मूल्य स्वागत योग्य है।

—प्रदीप कुमार
बी-1/113 जनक पुरी
नई दिल्ली-11005

श्री हरि कथा : सम्पादक : श्री सुरेन्द्र प्रसाद अग्रवाल, वर्ष 3 संयुक्तांक 1977 : श्री हरिनाम महिमा मानव सेवा विशेषांक, पृष्ठ : 7 , प्रकाशन स्थान 15 इंस्टीट्यूशनल एरिया, लोधी रोड, नई दिल्ली।

'मानव जीवन का लक्ष्य केवल ईश्वर प्राप्ति है।' इसी परम पवित्र भाव से प्रेरित होकर प्रस्तुत संयुक्तांक विशेषांक प्रकाशित किया गया है।

साधारणतः भक्ति-क्षेत्र के पत्र पत्रिकाएं धार्मिक विचारों और आराधना पद्धतियों के प्रचार-प्रसार पर ही अपनी शक्ति व्यय करते हैं। इस रूढ़िवादी परम्परा से हटकर पत्रिका को नया कलेवर देकर ज्ञानवर्द्धक बनाने का सफल प्रयास किया है।

स्वामी 'श्री निश्चलानन्द सरस्वती' जी का दार्शनिक लेख 'श्रुति सम्मत् शब्द शक्ति एवं हरिनाम' इस अंक का एक श्रेष्ठ उपयोगी एवं विद्वत्तापूर्ण निबन्ध है। श्रीमद् भागवत में हरिनाम-महिमा'—'महामण्डलेश्वर श्री रामदास शास्त्री, एवं श्री हरिनाम चिन्तामणि, लेखक श्री श्याम लाल हकीम, ज्योतिष शास्त्र में भगवन्नाम तथा प्रार्थना का चमत्कार भी ऊंचे स्तर के गम्भीर विवेचनात्मक निबन्ध हैं। भक्त रामशरण दास का निबंध 'संतों का हरिनाम प्रचार' भी धार्मिक दृष्टिकोण से विशेष महत्व का है। मध्ययुगीन संतों और सगुण भक्तों ने जो ईश्वर नाम का बखान किया है उसका सप्रामण परिचय निबन्ध में दिया गया है।

पत्रिका में कुछ निबन्ध आनंदमयी मां एवं श्री हरिनाम की प्रशंसा और उनकी भक्ति-पद्धति के परिचय पर हैं जो उनके भक्ति के लिए ज्ञानवर्द्धक एवं उपयोगी हैं। अनेक भक्तों, संतों, विचारकों एवं दार्शनिकों की सूक्तियों का संग्रह और उनकी व्याख्या भी कई निबन्धों में सफलता के साथ की है।'

[शेष पृष्ठ 36 पर]

केन्द्र के समाचार

धान की पैदावार में वृद्धि

उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश और उड़ीसा राज्यों के विस्तृत भू-खण्डों में धान की पैदावार को आसानी से दुगुना किया जा सकता है। इसके लिए सामुदायिक नर्सरी कार्यक्रम द्वारा जल्दी बिजाई की जानी चाहिए। और धान की उच्च किस्म की जल्दी पकने वाली किस्मों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

यदि चावल की फसल को पूर्णत: वर्षा के पानी पर निर्भर रहना है तो इसके लिए लगातार तीन महीनों तक प्रत्येक माह औसतन 30 सेंटीमीटर वर्षा तो कम से कम जरूरी है। इस विस्तृत क्षेत्र में जुलाई और अगस्त के महीनों में तो प्रत्येक मास 30 सेंटीमीटर से अधिक वर्षा होती है परन्तु सितम्बर के महीने में 20 और 30 सेंटीमीटर के बीच वर्षा होती है।

इस क्षेत्र में चावल की पैदावार का क्षेत्र भारत में चावल की खेती के कुल क्षेत्र का लगभग 45 प्रतिशत है, परन्तु वहां चावल की पैदावार बहुत कम होती है। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि कृषक आमतौर पर लम्बी अवधि अर्थात् 134 से 145 दिनों की अवधि में पकने वाले बीजों की किस्में बोते हैं। लम्बी अवधि की किस्मों के बीजों के बोने से पकाई के समय सूखे का असर पड़ने की संभावना रहती है। सितम्बर में वर्षा कम होती है और कभी-कभी तो जल्दी समाप्त हो जाती है। इस कारण देर से पकने वाली फसल पर पकाई के बहुत ही महत्वपूर्ण समय पर पानी की कमी के कारण हानि पहुंच सकती है।

वास्तव में समस्या प्राकृतिक वर्षा के पानी से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए धान की बिजाई के समय और अवधि को सुव्यवस्थित करने की है।

इस समस्या का आसानी से समाधान किया जा सकता है। इसके लिए सामुदायिक नर्सरी कार्यक्रम द्वारा बिजाई जल्दी की जानी चाहिए और एक सौ से एक सौ पच्चीस दिनों में पकने वाले उच्च किस्म के बीजों की खेती की जानी चाहिए। जहां तक उच्च किस्म की जल्दी पकने वाली किस्मों का संबंध है, जून में रोपी गई पौध अगस्त के अन्त तक और जुलाई में रोपी गई पौध सितम्बर तक पूरी तरह पक जाएगी। इसके साथ-साथ रबी की फसलों के लिए खेत भी जल्दी खाली हो जाएंगे और गेहूं, आलू अथवा रबी की अन्य कोई फसल समय पर बोई जा सकेगी।

मध्य प्रदेश में खरीफ 1976 के दौरान यह देखा गया था कि उच्च किस्म के जल्दी पकने वाले बीज सामुदायिक नर्सरी कार्यक्रम के अन्तर्गत अपनी पकाई के समय सूखे से बच पाए थे जबकि लम्बी अवधि के स्थानीय बीजों से कम फसल प्राप्त की जा सकी थी।

अनाज की रक्षा

यदि फसल कटने या उठाने से पहले मौसम खराब हो जाए और पानी बरस जाए, तो फसल को कई तरह से नुकसान पहुंचता है, जैसे दाना बदरंग हो जाता है, उसमें फफूंद लग जाती है, और उसके पौष्टिक गुण भी नष्ट हो जाते हैं।

इसलिए केन्द्रीय खाद्य विभाग ने योजना के अंतर्गत "अनाज रक्षा अभियान" चलाने का एक कार्यक्रम बनाया है। कार्य-क्रम के मुख्य अंग ये हैं :—

(1) किसानों और व्यापारियों को अनाज को गोदाम में रखने के आधुनिक और वैज्ञानिक तरीके बताए जाएंगे।

(2) किसानों को अनाज रखने के आधुनिक कोठे दिए जाएंगे ;

(3) किसानों, व्यापारियों और विस्तार अधिकारियों को यह बताया जाएगा कि अनाज को ठीक तरीके से गोदामों में सुरक्षित रखने के क्या उपाय हैं, ताकि वे आगे भी इनका प्रचार कर सकें ;

(4) राज्य सरकारों, स्वैच्छिक संस्थाओं आदि को अपने क्षेत्र में बड़े पैमाने पर अनाज को गोदामों में सुरक्षित रखने के कार्यक्रम में सहायता प्रदान की जाएगी।

अनाज के कोठों की योजना के अंतर्गत 1972 से 19 राज्यों और एक संघ क्षेत्र को 1.39 करोड़ रु० ऋण के रूप में दिए जा चुके हैं। चौथी पंचवर्षीय योजना में इस कार्यक्रम के लिए 98 लाख रुपये ऋण के रूप में दिए गए। इस वर्ष मार्च के अंत तक 75,530 अनाज के कोठे किसानों को दिए जा चुके हैं।

समन्वित वन विकास

वनों के समन्वित विकास कार्य के एक भाग के रूप में मगरमच्छ प्रशिक्षण और अनुसन्धान तथा ठंडे रेगिस्तान के बारे में अनुसन्धान कार्य आरम्भ किया जाएगा।

हैदराबाद में दो वर्षों के लिए अस्थायी तौर पर एक केन्द्रीय मगरमच्छ प्रशिक्षण और अनुसन्धान खोला जाएगा। इस संस्थान में आरम्भ में मगरमच्छ प्रजनन और अनुसन्धान के लिए निरीक्षण और तकनीकी स्तरों के अधिकारियों को प्रशिक्षण दिया जाएगा। इसी प्रकार लद्दाख और लाहौल स्पीति क्षेत्रों में ठंडे रेगिस्तान के बारे में अनुसन्धान परियोजना शुरू करने की भी योजना है। परियोजना का प्रधान कार्यालय लेह और प्रयोगात्मक केन्द्र केलांग (हिमाचल प्रदेश) में होगा। इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य वन विकास के लिए वृक्षों की अनुकूल नई किस्मों का विकास करना है। ★

उत्तर प्रदेश

दुग्ध उत्पादन योजना

राज्य के छः पिछड़े जिलों में दुग्ध उत्पादन को बढ़ावा देने तथा उनकी आर्थिक दशा सुधारने के उद्देश्य से राज्य दुग्ध विकास विभाग ने 1.17 करोड़ रुपये की योजना आरम्भ की है। उक्त योजना के अन्तर्गत दूध को ठंडा करने के केन्द्र खोले जाएंगे तथा पास्चुराइजेशन संयत्र लगाए जाएंगे। इसके अतिरिक्त प्रत्येक जिले में दुग्ध एकत्र करने के लिए कम से कम 50 प्राथमिक सहकारी समितियां गठित की जाएंगी। इस योजना के अन्तर्गत आने वाले, जिले बांदा, वाराणसी, मिर्जापुर, जालौन, हमीरपुर और इलाहाबाद हैं।

धान की नर्सरी

उत्तर प्रदेश ने इस वर्ष 60,000 हेक्टेयर क्षेत्र में धान की नर्सरी लगाने की योजना तैयार की है। यह क्षेत्र पिछले वर्ष की अपेक्षा लगभग दुगना है इसका उद्वेश्य खरीफ उत्पादन में बृद्धि करने हेतु किसानों को, विशेषकर उन साधनहीन किसानों को जो स्वयं यह काम करने में असमर्थ है, वर्तमान खरीफ में धान के पौधे उपलब्ध कराना है। विभिन्न राजकीय फार्मों से कहा गया है कि वे अपने क्षेत्र के लगभग 25 प्रतिशत भाग में धान की नर्सरी लगाएं। इसके अतिरिक्त, स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रत्येक नलकूप क्षेत्र में सामान्यतया पांच हेक्टेयर क्षेत्र में सामुदायिक नर्सरी लगायी जाएगी। मुख्य सचिव, श्री कृपा नारायण श्रीवास्तव ने निर्देश दिए हैं कि कार्यक्रम के लिए किसानों और भूमि का चयन मई के महीने में हो जाना चाहिए था जिससे जून के पहले पखवारे में नर्सरी की बुआई का काम पूरा हो सके।

चना के क्रय में रियायतें

राज्य सरकार ने 1977-78 की रबी फसल में बुन्देलखण्ड क्षेत्र के सरकारी क्रय के केन्द्रों पर चना (देशी) और जौ के क्रय सम्बन्धी विशिष्ट शर्तों में कुछ ढील दे दी है। झांसी, ललितपुर बांदा, हमीरपुर और जलौन जिलों के जिला मैजिस्ट्रेट को जारी किए गए निर्देशों में इस बात पर जोर दिया गया है कि सरकारी क्रय केन्द्रों पर विक्रय हेतु लाए गए चना (देशी) तथा जौ जिनमें 2 प्रतिशत से अधिक से अधिक 5 प्रतिशत तक विजातीय पदार्थ मिले हों, उन्हें स्वीकार किया जाय किन्तु उनमे एक प्रतिशत से अधिक और दो प्रतिशत तक विजातीय पदार्थों पर प्रति क्विन्टल एक रुपये की कटौती की जाए। यह कटौती ग्रेड-3 के चना और जौ में की जाने वाली कटौती के अतिरिक्त होगी।

पंजाब

अनाज सुखाने की मशीन

केन्द्र राज्य फार्म, लुधियाना में सौर उर्जा से अनाज सुखाने की पहली मशीन लगायी गई है। इसका डिजाइन विज्ञान और टेक्नोलोजी विभाग के लिए राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम ने किया है। इस मशीन पर 2.5 लाख रु० की लागत आई है और इसकी अनाज सुखाने की क्षमता 10 टन प्रतिदिन की है। यह सभी आजमाइशी प्रयोगों में सफल रही है।

यह मशीन फसल कटाई के सीजन में 85 से 90 प्रतिशत समय में चालू रहेगी और बदली रहने पर भी यह मशीन काम करेगी यद्यपि इसकी क्षमता थोड़ी कम हो जाएगी। इस मशीन से अनाज सुखाने पर 6 रु० प्रति टन की लागत आती है जबकि अन्य प्रणाली से प्रति टन 100 रु० का खर्चा आता है।

खेतों और आंगन में धूप में रखकर अनाज सुखाने की परम्परागत विधि में खराब मौसम में नुकसान होने और अनाज के इधर-उधर बिखर जाने का जोखिम रहता है। अनुमान है कि हमारे देश में इस प्रकार अनाज सुखाने से लगभग एक करोड़ टन अनाज नष्ट हो जाता है। प्रारम्भिक विश्लेषणों से पता लगता है कि सौर उर्जा से अनाज सुखाने वाली इस मशीन की अधिक अनाज सुखाने की क्षमता, कम लागत और रख-रखाव के न्यूनतम खर्चों के कारण भारी मांग है।

इस मशीन को विशेषकर चावल और दाल दलने वाले, तेल पेरने वाले, सूखे मेवों आदि के संगठित कृषि उत्पादन उद्योगों में भी स्थापित किया जाएगा और ये मशीनें किसानों, सहकारिताओं राज्य फार्मों, बीज निगम, भारतीय खाद्य निगम आदि को भी मुहैया की जाएगी।

राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम निकट भविष्य में दो और ऐसी मशीनें स्थापित करने की सोच रहा है जिनमें से एक देश के पूर्वी भाग में तथा दूसरी केरल में होगी। इस तरह की पहली मशीन का विकास प्रो० मुयुवीरापत्त अने अन्नामलेड में किया था, जिसकी अनाज सुखाने की क्षमता एक टन प्रति दिन थी।

मध्य प्रदेश

विपुल उत्पादन कार्यक्रम

भोपाल संभाग में चालू साल के खरीफ मौसम में 86,500 हेक्टेयर खेतों में धान, जुआर और मक्का की ज्यादा पैदावार देने वाली किस्मों की फसल ली जाएगी। इसके अलावा, इस साल संभाग में 40 हजार हेक्टेयर में सोयाबीन की खेती की जायगी।

लक्ष्यों के अनुसार खरीफ में 3,200 हेक्टेयर में बौनी धान और 2,100 हेक्टेयर में दूसरी ज्यादा उपज देने वाले धान बोए जाएंगी। इसी प्रकार, 18,090 हेक्टेयर में जुआर की कम्पोजिट किस्में 1,010 हेक्टेयर में संकर जुआर और 58,800 हेक्टेयर में दूसरी सुधरी हुई जातियों की जुआर की फसल ली जाएगी।

कोई 2,400 हेक्टेयर में मक्का की संकर और कम्पोजिट किस्में बोई जाएंगी।

कार्यक्रम चलाने के लिए बीज की व्यवस्था सरकारी फार्मों और राष्ट्रीय बीज निगम के जरिये की जाएगी। संभाग के किसानों को सहकारी संस्थाओं द्वारा 1,915 टन और व्यपारियों द्वारा 1,740 टन रासायनिक खाद बांटी जाएगी।

भोपाल संभाग के किसानों में सोयाबीन की खेती लोकप्रिय हो रही है। पिछले साल रायसेन जिले के सरकारी फार्म में प्रति एकड़ नौ क्विटल सोयाबीन की फसल ली गई, जो किसानों का हौसला बढ़ाने वाली थी। इस साल, संभाग में चालीस हजार हेक्टेयर में सोयाबीन की खेती करने का लक्ष्य रखा गया है।

सिंध परियोजना

ग्वालियर सभाग की सिन्ध परियोजना के प्रथम चरण का कार्य पूरा हो चुका है। बरसात का पानी पहली बार इकट्ठा करके हरसी जलाशय में सिंचाई के लिए मोड़ा जाएगा। सिंध नदी पर मुख्य बांध का निर्माण पूरा हो जाने से इस साल 5 मार्च से सिंध नदी का प्रवाह रोक दिया गया है जो मई के अन्त तक पूरक नहर द्वारा हरसी जलाशय में डाल दिया गया। इससे, 27,200 हेक्टेयर रकबे में सिंचाई होने लगी.

आठ करोड़ 34 लाख रु० लागत की सिंध परियोजना के प्रथम चरण में मुख्य बांध और पूरक नहर के निर्माण के अलावा सिन्ध और पार्वती नदी के बीच सिंचाई के लिए 19 किलोमीटर लम्बी नहर बनाई जा रही है। इसके बनते ही शिवपुरी जिले की करेरा तहसील में 4,400 हेक्टेयर जमीन में खरीफ फसलों की सिंचाई होने लगेगी।

गोबर गैस प्लांट

इस साल संभाग के चारों जिलों में 1,150 गोबर गैस प्लांट लगाए जा रहे हैं। इनमें से शिवपुरी, गुना और ग्वालियर में हर एक जिले में 350 प्लांट और दतिया जिले में 100 प्लांट लगाए जाएंगे। राज्य शासन आम गांव वालों को खर्च का 20 फीसदी और आदिवासियों को 55 फीसदी अनुदान देगा। इसके लिए कर्ज की भी व्यवस्था की गई है।

राजस्थान

चल चिकित्सा इकाई

राज्य की चल शल्य चिकित्सा इकाई के जरिये कोटा जिले के सीतावाड़ी में आयोजित शिविरों में अब तक 30 हजार रोगियों की चिकित्सा की गई है। इसके अतिरिक्त, लगभग 7 हजार रोगियों की नेत्र एवं शल्य चिकित्सा की जा चुकी है।

सहरिया आदिवासियों की घनी बस्ती सीतावाड़ी में इस इकाई द्वारा अब तक 13 शिविर आयोजित किए गए हैं। इस माह की पहली तारीख से ऐसा ही एक शिविर फिर लगाया गया है जिसमें 2 हजार 203 रोगियों की स्वास्थ्य परीक्षा की जा चुकी है। इनमें 888 नेत्र रोगी, 804 विभिन्न बीमारियों के तथा 103 दांत रोगी थे। कुल 575 रोगियों को भर्ती किया गया जिनमें 560 की शल्य चिकित्सा की गई है।

शल्य चिकित्सा में 315 आंखों के, 5 हड्डियों के और 30 स्त्री रोग सम्बन्धी आपरेशन किए गए। कुल 53 लोगों के एक्स-रे लिये, 33 की स्क्रीनिंग हुई और 3 की ई० सी० जी० की गई। क्षय रोग से पीड़ित 33 बीमारों की जांच की गई।

देश में अपने ढंग की पहली चल शल्य चिकित्सा इकाई 1956 में कायम हुई थी। गांव-गांव में डेरा डालकर दिसम्बर, 76 तक इस इकाई ने लगभग 4 लाख रोगियों का इलाज किया है। इनमें लगभग 98 हजार 400 रोगियों की शल्य चिकित्सा की गई है।

कृषि विज्ञान केन्द्र

सीकर जिले में फतेहपुर के भारतिया कृषि विज्ञान केन्द्र में अब तक छह प्रशिक्षण शिविर लगाए हैं जिनसे काश्तकारों को खेती बाड़ी का अच्छा ज्ञान हासिल हुआ।

एक महिला शिविर भी आयोजित किया गया। ग्रामीण स्त्रियों को गृह वाटिका तैयार करने, कुपोषण से होने वाली हानियों एवं सफाई से रहने के लाभों की व्यावहारिकि जानकारी करायी गयी। ग्रामीण औरतों को विविध अचार बनाने का भी प्रशिक्षण दिया गया।

राजस्थान में यह अपने ढंग का पहला कृषि विज्ञान केन्द्र है। देश में ऐसे 19 केन्द्र हैं। राज्य में स्थापित केन्द्र का बजट 10 लाख रु० साल का है। सेठ नन्द लाल भरतिया की स्मृति में उनके परिजनों ने वहां तीन लाख रु० व्यय कर एक भवन भी बनवाया है।

जनवरी, 77 से भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् ने उदयपुर के कृषि विश्व विद्यालय के माध्यम से इस केन्द्र का संचालन संभाल लिया है। अब इस केन्द्र का कार्य क्षेत्र बहुत व्यापक हो हो चुका है।

पशु नस्ल सुधार कार्यक्रम के अन्तर्गत इस विज्ञान केन्द्र ने हाल ही में दो होल्सटोन नस्ल के सांड भी विदेशों से मंगवाए हैं। इनसे इस केन्द्र में गायों की नस्ल सुधारने में काफी मदद मिलेगी। पशु पालकों के लिए यह बहुत उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं।

ग्राम सेवकों को प्रशिक्षण देने के लिए केन्द्र में भी पूरी व्यवस्था है। किसानो को केन्द्र तक लाने ले जाने के लिए विज्ञान केन्द्र स्वयं बस की व्यवस्था कर रहा है। प्रशिक्षण हेतु आने वालों के खाने पीने एवं ठहरने की निःशुल्क व्यवस्था विज्ञान केन्द्र की ओर से की जाती है। इस प्रकार इस विज्ञान केन्द्र से कृषकों एवं पशु पालकों में एक नई चेतना जागृत हो रही है।

हिमाचल प्रदेश

सेवों का परिरक्षण

हिमाचल प्रदेश में 80 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि और वनों प्राप्त फलों आदि वस्तुओं की आय पर निर्भर है। अनुमान है कि इन चीजों का 20 प्रतिशत भाग गोदामों में रखने और आने-जाने के दौरान नष्ट हो जाता है। यह समस्या हिमाचल प्रदेश के संदर्भ में बहुत महत्व की है क्योंकि हिमाचल प्रदेश सेवों एवं बेमौसम की सब्जियां देश के विभिन्न राज्यों को भेजने वाला सबसे अग्रणी राज्य है। ये चीजें जल्दी खराब हो जाती हैं। एक अन्य पदार्थ जिसकी कृत्रिम खेती का महत्व बढ़ता जा रहा है वह है खुंबी। यह और भी जल्दी नष्ट हो जाती है।

यह नुकसान किस प्रकार का होता है और इसके क्या कारण हैं इनका पता लगाने के लिए वैज्ञानिक अध्ययन किया गया है। बहुत से मामलों में यह रोग खेतों में ही लग जाता है जो गोदामों और आने-जाने के समय और भी बढ़ जाता है। कुछ मामलों में यह रोग लपेटे जाने वाले दूषित कागजों, टोकरियों, पेटियों या गोदामों में लग जाता है।

साहित्य समीक्षा......[पृष्ठ 32 का शेषांश]

इस प्रकार विवेच्य सामग्री की दृष्टि से अंक सफल है। धार्मिक एवम् साहित्यक दोनों ही प्रवृत्तियों के व्यक्तियों के लिए उपयोगी है। एक निबन्ध श्री पी० तिवारी जी का अंग्रेजी में भी हैं। पत्रिका सचित्र है, साज-सज्जा की दृष्टि से सामान्य इसकी छपाई आद्रि ठीक है।

★

—अशोक कुमार गर्ग
202 ए, तुराबनगर,
गाजियाबाद-202001
(उ० प्र०)

एशिया की लोककथाएं : संपादक : केन्द्रीय संपादक समिति; प्रकाशक, राजपाल एण्ड सन्स, पृष्ठ संख्या—94, मूल्य : 12·00 रु०।

प्रस्तुत पुस्तक एशियन कल्चर सेन्टर फार यूनेस्को की एक परियोजना के अन्तर्गत, जिसमें एशियाई बच्चों के लिए अधिक संख्या में और कम मूल्य पर सुन्दर सचित्र पुस्तकें उपलब्ध कराने की व्यवस्था है, नेशनल बुक ट्रस्ट आफ इंडिया के सहयोग से राजपाल एण्ड संस द्वारा प्रकाशित की गई है। इसमें सोलह एशियाई देशों में से प्रत्येक की एक-एक लोक कथा संकलित है। ये सभी कहानियां बच्चों को बौद्धिक दृष्टि से पटु, चारित्रिक दृष्टि से अच्छे चरित्रवान् और शारीरिक दृष्टि से सबल और स्वस्थ बनाने में पूर्ण समर्थ हैं। बंगला देश की कहानी में कौआ-गौरया को ही अपनी धूर्तता से खा जाना चाहता है, पर गौरेया भी कम चतुर नहीं है। गौरेया ने कौए के सामने खाने से पहले एक ऐसी शर्त रखी, जिससे अंत में वह भस्मसात् हो गया। इस कहानी का निष्कर्ष है कि धोखेबाजी और लालच बुरी बला है। इसी प्रकार भारत की कहानी में एक मूर्ख राजा का मंत्री राजा को खूब लूटता है। अपने से द्वेष रखने वाले को मौत के घाट उतरवा देता है। अंत में मंत्री अपनी चालाकी और राजा अपनी मूर्खता के कारण दोनों ही मौत का शिकार हो जाते हैं। मंत्री को भी राजा को गुमराह करने का अच्छा फल मिल जाता है। ईरान की कहानी का निष्कर्ष यह है, कि दोस्त को उसकी निश्छलता और भलाई का लाभ और दुश्मन को उसकी धोखेबाजी और बुराई का दण्ड मिला। इसी प्रकार अन्य देशों की कहानियों में भी अनेक उपदेश भरे पड़े हैं। बच्चों के कोमल मन पर इन कहानियों का बड़ा चरित्र निर्माणकारी प्रभाव पड़ता है और उनके भावी जीवन को सफल बनाने में इनसे काफी सहायता मिल सकती है।

पुस्तक का आवरण पृष्ठ बहुत आकर्षक है। रंगीन चित्रों की साज-सज्जा से पुस्तक काफी सुन्दर बन पड़ी है। कागज बहुत अच्छा है। छपाई की दृष्टि से भी पुस्तक बहुत आकर्षक है। प्रूफ अशुद्धियां नगण्य हैं।

★

—विद्योत्तमा
ए-74, सूर्यनगर,
गाजियाबाद (उ० प्र०)

बाजरे की पैदावार कैसे बढ़ाई जाए ?

बाजरा की फसल मुख्यत: वर्षा पर निर्भर करती है। मानसून के देर से शुरु होने पर अगर बाजरे की बिजाई देर से की जाए तो इसकी पैदावार पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। अधिकांश मामलों में मानसून में जल्दी सुस्ती पड़ जाने के कारण बाजरे की फसल पर कुप्रभाव पड़ता है।

इन कमियों को दूर करने के लिए एक नीति सुझाई गई है। इसमें निम्न-लिखित बातें शामिल हैं। यदि वर्षा समय पर होती है तो बाजरे को सीधे बो दिया जाए, संभवत: सात जुलाई के आस पास बाजरे की नर्सरियां लगाना चाहिए ताकि उनका तीन से चार सप्ताह बाद प्रतिरोपण किया जा सके, क्योंकि प्रति-रोपित पौधों से भी सीधे बोए गए बीजों के समान फसल प्राप्त की जा सकती है इस नीति का तीसरा अंग है बाजरे की लघु अवधि की किस्मों का बोया जाना ताकि मानसून में शीघ्र सुस्ती पड़ जाने की शंका से बचा सके।

पौधों की अनुकूलतम संख्या में कमी के कारण भी बाजरे की उत्पादकता पर असर पड़ता है। बाजरे की बिजाई कूंढ़ों में की जाती है। अधिकांश मामलों में खेत असमतल होते हैं। इसके परिणाम स्वरुप कम अंकुर फूटते हैं। बाजरे की धनी बिजाई के लाभ समझाने के लिए एक विशेष अभियान चलाना होगा। इन खेतों में बहुतायत से लगाए गए पौधों को जुलाई के अन्त में, या अगस्त के आरम्भ में जब अधिक नमी हो जाती है, प्रतिरोपण के लिए जड़ से उखाड़ा जा सकता है।

हरियाणा में वर्ष 1977-78 के लिए 7.25 लाख टन : बाजरे के उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है जबकि पिछले वर्ष का अनुमानित उत्पादन 5.3 लाख टन था। हरियाणा जहां बाजरा खरीफ की एक प्रमुख फसल है, का सर्वाधिक उत्पादन 1970-71 का 8.62 लाख टन का था।

(भा० कृ० अ० प०)

राजस्थान में पिछले वर्ष की 16 लाख टन फसल की तुलना में वर्ष 1979-78 के लिए 1850 लाख टन बाजरे के उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इस राज्य में भी 1970-71 में ही 26.74 लाख टन का सर्वाधिक उत्पादन हुआ था।

गुजरात में बाजरा खरीफ की मुख्य फसल है। यहां राज्य के खाद्यान्न उत्पादन के क्षेत्र के लगभग एक तिहाई मात्र में बाजरे की खेती होती है। 1974-75 में 5.56 लाख टन और 1975-76 में 13.91 लाख टन बाजरा पैदा हुआ था। 1974-75 में और फिर 1976-77 में भारी और निरंतर होने वाली वर्षा के कारण फसल पर विपरीत प्रभाव पड़ा था। रोग रोधक संकर किस्म के नए बीजों जैसे बी०जे०—104, सी० जे०—104, जे-1399 और बी०के०—560 बोने का सुझाव दिया गया है। ★

निदेशक प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-1 द्वारा प्रकाशित और
केसर क्यारी इलैक्ट्रिक प्रेस फरीदाबाद-121003 में मुद्रित।

Regd. No. (D)D/98

बजट में ग्राम विकास के लिए अधिक धन की व्यवस्था

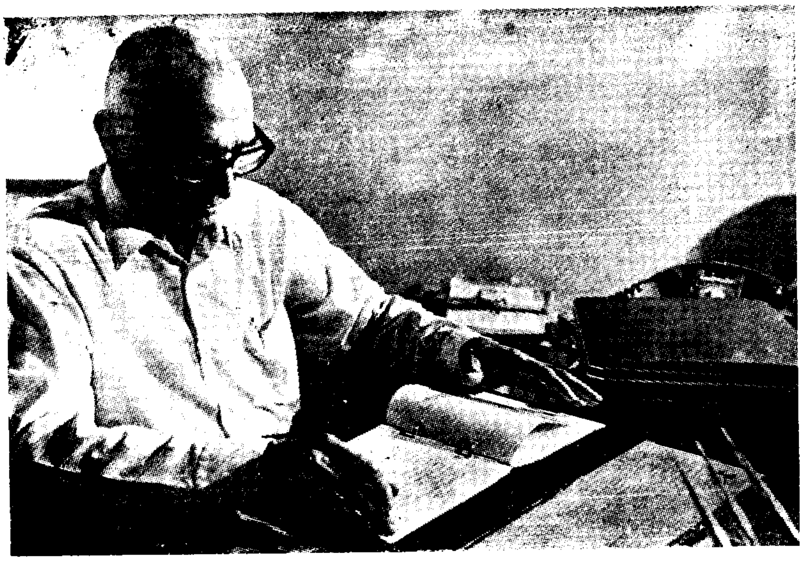

केन्द्रीय वित्त मंत्री श्री पटेल संसद् में पेश करने से पहले 1977-78 के बजट को अन्तिम रूप देते हुए

इस वर्ष के बजट में योजना व्यय में 27 प्रतिशत की वृद्धि की गई है। गत वर्ष की योजना 7852 करोड़ रु० की थी, परन्तु 1977-78 में यह बढ़ा कर 9960 करोड़ रु० की कर दी गई है। कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए सिंचाई की आवश्यकता को ध्यान में रख कर सिंचाई योजनाओं के लिए राज्यों को अग्रिम योजना सहायता के रूप में देने को 100 करोड़ रु० की, छोटी सिंचाई योजनाओं के लिए 260 करोड़ रु० की और पम्प सेटों को बिजली देने हेतु ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम के लिए 175 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। गांवों में पेय जल की व्यवस्था के लिए मौजूदा व्यवस्था के अलावा 40 करोड़ रु० की अतिरिक्त राशि की व्यवस्था की गई है। इसी तरह बिजली के विकास के लिए जो कृषि और उद्योग, दोनों के लिए अत्यन्त आवश्यक है, 234 करोड़ रु० की राशि रखी गई है।

खादी और ग्रामोद्योगों में अधिकाधिक लोगों को रोजगार देने की जो क्षमता है, उसे ध्यान में रखकर इनके लिए 35 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। अनुमान है कि इससे 25 लाख व्यक्तियों को रोजगार मिल सकेगा।

देहाती इलाकों में छोटे उद्योगों की स्थापना को प्रोत्साहन देने तथा कम्पनियों को ग्राम कल्याण और ग्रामोत्थान के कामों में योगदान को प्रोत्साहन के लिए भी कर सम्बन्धी छूट दी गई है। हैंडलूम, पावर लूम, पानी के पम्प, कागज की छोटी मिलों, दियासलाई के कुटीर उद्योग, छोटे इस्पात कारखानों आदि को उत्पादन शुल्क में राहत दी गई है। गांवों में सड़कें बनाने के लिए 20 करोड़ रु० से कार्य की शुरूआत करने की व्यवस्था है।